व्याख्यानी साध्वी जी म० श्री निर्मला श्री जी एम ए, साहित्यरत्न

आठ वर्ष की अल्प वय में आपने अपनी मातु श्री के साथ भगवती दीक्षा अंगिकार कर निरंतर ४० वर्ष में मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल, बिहार व उत्तरप्रदेश में विचरण किया, वहाँ की जनता को धर्म का बोध दिया।

इस वर्ष जयपुर नगर को राजस्थान में पहली बार आपका चातुर्मास कराने का गौरव प्राप्त हुआ है। आपकी सौम्यता, ओजपूर्ण वक्तृता, जन्म से गुजराती भाषी होने पर भी हिन्दी भाषा पर पूर्णाधिकार आदि सद्गुणों ने यहाँ के संघ को काफी लाभान्वित किया है। भाईयों और विशेष कर बहिनों में विशेष जागृति आई है। आपकी निश्रा में चार मास क्षमण व अन्य सामुहिक तप का आराधन खूब उत्साह से हुआ है।

राजस्थान के क्षेत्र आपसे लाभान्वित हो सके यही शुभ भावना।

मास क्षमण तप के तपस्वी गण

पर्वाधिराज के पुनीतः अवसर पर इन महातपस्वीयो ने मास क्षमण तप का आराधन किया है, इनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कर रहे है।

(सम्पादक)

श्री इन्द्रचंद जी चोरडिया

श्री चोरडिया जी का अधिकांश समय जयपुर से वाहर ही बीता है। गत ४-५ वर्ष से आप यही रह रहे है। पूज्य विशाल विजय जी म० सा० एवं पन्यास प्रवर श्री भानु विजयजी म० के चातुर्मासो मे इनको धर्म की लग्न लगी। इन मुनिराजों के साथ विहार मे रहकर आपने पूर्व व पश्चिम के तीर्थों की पैदल यात्रा की. आप जी० सी० इलैक्ट्रिक एण्ड रेडियो कम्पनी के संचालक श्री गोपीचन्द जी चोरडिया के बड़े भ्राता है।

सौ० श्रीमती भवर बाई वैद

आपने ७० वर्ष की अवस्था में शान्ति पूर्वक मास क्षमण तप की आराधना कर 'आयु मे तपस्या का सम्वन्ध है' की चर्चा को निर्मूल कर दिया है। आप श्री बुधसिह जी वैद की धर्म पत्नी है। संघ मत्री हीराचन्द जी वैद की मात श्री है। साध्वीजी म० श्री निर्मला श्री की निश्रा मे आपकी यह तपस्या सानन्द सम्पन्न हो रही है।

मास क्षमण तप के तपस्वी गण

सौ० श्रीमती शीतला बाई भंसाली

अपनी मातृ श्री सौ० श्रीमती भंवर बाई वैद के साथ ही आप भी मास क्षमण तप की आराधना में संलग्न है। आप श्री नेमीचन्द जी भंसाली की धर्म पत्नी व संघ मन्त्री हीराचंद वैद की छोटी बहिन है। स्वास्थ्य ठीक नहीं रहने पर भी अत्यधिक उल्लास के साथ आप तपस्या कर रही है।

सौ० श्रीमती गुलाबबाई कोचर

आप बीकानेर निवासी श्री चम्पालाल जी कोचर की धर्म पत्नी है। धार्मिक विचार धारा से ओत प्रोत जीवन है ही, साथ ही साध्वी जी म० श्री निर्मला श्री जी की प्रबल प्रेरणा से मास-क्षमण तप सम्पन्न किया है।

इन तपस्वीयों के अलावा १० और मास क्षमण इस वर्ष जयपुर में सम्पन्न हुए है, इस संघ की ओर से सबका बहुमान कर तप के प्रति अनुमोदना प्रकट की गई है।

अनुक्रमणिका

चिन्तन करण

तुम्हें कभी भी दु:ख कष्ट या आपत्ति आवे, तव घवरा जाते हो और तुम्हारा मन अस्वस्थ हो जाता है। पर उस वक्त तुम यह विचार करो हे जीव! यह दु:ख कष्ट या आफत वैगर आमंत्रण आई हुई नहीं है। पूर्व में तेरे कर्मो द्वारा आमंत्रण दिया हुआ है इसलिये ही ये आये हैं। तो अव इनका स्वागत कर, पर इनसे घवराकर दूर मत भाग। दु:ख तो वासुदेव, चर्कवर्ती और तीर्थकरों को भी आते हैं तो तेरी क्या बिसात ? तू इन सब दु:खों को शान्ति से सहन करले जिससे नया कर्म बंधन होवे नहीं।

ऐसे विचार करने से तुम्हारा मन शांत रहेगा और दु:ख दु खरूप मालुम पडेगे नहीं।

मनु महाराज स्मृति में कहते हैं:—

सुख का मूल सन्तोष है, और दु:ख का मूल तृष्णा है, इसलिये सुख को चाहने वाले व्यक्ति को संतोष का आश्रय लेकर संयमी बनना चाहिये।

संतोषी रोज का रोज कमाता है तो भी सुखी होता है, और असंतोषी धन का ढेर पड़ा होवे तो भी दु:खी रहता है।

संतोषी अकेला होवे, कोई सगा सम्बन्धी न होवे तो भी मस्त रहता है, असंतोषी अनेक सगे सम्वन्धी व मित्र होते हुये भी दु:खी रहता हैं।

याद रखो राग द्वेप की जितनी तीव्रता उतना ही दु:ख अधिक।

तुम राग द्वेष हटाओ और कषायो को मन्द करो तो सुख का अनुभव जरूर कर सकते हो। "शास्त्र कारो ने कहा है" "कषाय मुक्ति: किल मुक्ति रेव" अर्थात कपाय छोड़ने वाले को मुक्त आत्मा जितना सुख मिलता है। "वीतरागी सदा सुखी" इस महान वचन का रहस्य भी यही है।

रागद्वेश का तुम्हारे अनादि काल से संसर्ग चला आ रहा है, इसलिये वह तुम्हारे स्वभाव की वस्तु वन गया है। पर तुम थोडी देर के लिये दोनों का त्याग करो और वीतरागता का अनुभव करो तो तुमको ऊपर के वचनों की सार्थकता समझ मे आ जावेगी।

जैन संस्कृतिका-पावन पर्व

साध्वी निर्मलाजी एम ए, सा रत्न भा रत्न

पर्युषण-पर्व जैन संस्कृति और जैन परपरा का एक महा पर्व है। यह पर्व, एक ऐसा पर्व है, जिसमे साधक अपनी साधना पर अग्रसर होता हुआ आत्म शुद्धि करता है, मनोमन्थन करता है, और करता है वह अपने अन्त करण का सशोधन।

आध्यात्मिक जागृति का यह एक मङ्गल कारी पर्व है। भवभव से प्रसुप्त आत्मा को जगाने का यह सुवर्ण अवसर है। मानव ने अपने साल भर के जीवन मे क्या खोया और क्या पाया ? अपने जीवन के वही खाते को टटोलना और हिसाब-किताब को साफ रखना ही पर्वाधिराज पर्युषण पर्व की आराधाना का लक्ष्य है।

जीवन की परिभाषा करते हुए विचारकाने जीवन के तीन प्रकार बतलाये हैं—आसुरी जीवन, दैवी जीवन और अध्यात्म जीवन। जो जीवन भोग, विलास और तृष्णापर आधारित है उसे आसुरी जीवन कहते हैं। भौतिक जीवन आसुरी जीवन है। इसके मूल मे इच्छा, कामना और वासना रहती है। इच्छा आकाश के समान अनत है जो कभी पूर्ण ही नही होती। अत आसुरी जीवन को कभी सुख और शान्ति नहीं मिल पाती। धर्म का भूषण वैराग्य है, वैभव नहीं। वैभव और विलास मे पशुता का वास है और वैराग्य मे दिव्यता का। जो जीवन अहिंसा, सयम और तप पर आधारित है, उसे दैवी जीवन कहते हैं। क्योकि इसमे मनुष्य के मौलिक गुणो के विकास पर बल दिया गया है। जो जीवन आत्मलक्षी होता है उसे अध्यात्म जीवन कहते हैं जीवन का यह यह चरम विकास है। अध्यात्म जीवन का विकास तीन तथ्यो पर आधारित है-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र। इनगुणो के सपूर्ण विकास को ही वस्तुत अध्यात्म जीवन कहते हैं।

जैन धर्म की साधना अध्यात्म भाव की साधना है। उसका अन्तिम ध्येय है—वीतराग दशा की प्राप्ति। और उसका सर्व प्रथम सोपान है—सम्यक्त्व। सम्यक्त्व से प्रारम्भ होकर वीतराग दशा तक जैन धर्म की साधना का विशाल क्षेत्र है। साधना के इस विशाल क्षेत्र मे प्रत्येक व्यक्ति को आने का समान अधिकार है, न उसमे देश का बन्धन है, न जाति का और न उसमे नर-नारी का ही बन्धन है। मोह, ममता की निद्रा से जो भी और जब भी जाग उठे, वह तभी इस परमार्थ के परम पवित्र पथ पर आकर लग सकता है।

'पर्युषण' शब्द का अर्थ है—आत्मा के समीप में रहना। अनन्त काल मे यह आत्मा मिथ्या मे, मोह में और अज्ञान मे रहता आया है। पूरे एक वर्ष के बाद पुन यह शुभ अवसर आया है कि हम लोग अपने जीवन को भौतिकता से अध्यात्म की ओर, ममता से समता की ओर, और विभाव दशा से स्वभाव दशा की ओर ले जाए पर्युषण-पर्व, चित्त शुद्धि और आत्म शुद्धि का परम पवित्र पर्व है।

'पर्व शब्द का अर्थ है—परम पवित्र दिवस। पवित्र होता है, परतु आज का दिवस तो विशेष रूप से पवित्र है। पर्व दो प्रकार के होते हैं—"लौकिक और लोकोत्तर" लौकिक पर्व का अर्थ होता है—हर्ष, उल्लास और आमोद प्रमोद। लौकिक पर्व मनुष्य के शरीर का ही पोषण करता है उसके मन और आत्मा का नही। उसके विप-

रीत लोकोत्तर पर्व शरीर की सीमाओं से उपर मनुष्य को आत्मरत और आत्मप्रिय बनाता है। इसमें शरीर का शोपण भले ही हो परन्तु आत्मा का तो पोषण ही होता है। शरीर को भोजन भले ही न मिले, किन्तु आत्मा को तो तप, त्याग, वैराग्य और विवेक का भोजन मिलता ही है। सब धर्मों मे लौकिक और लोकोत्तर दोनों तरह के पर्व है। मुसलमानों मे रमजान का पर्व उनकी दृष्टि से लोकोत्तर पर्व है। इन दिनों मे वे कोई बुरा काम नही करते हैं। ईसाइयों मे 'क्रिसमिस' का दिन लोकोत्तर पर्व है। इसी तरह हिन्दू धर्म में भी है. लेकिन जैन धर्म की इन सबसे अपनी अलग ही विशेषता है। उसके जितने भी पर्व है, सब लोकोत्तर पर्व ही है। लौकिक पर्वो का कहीं नामो निशान भी नहीं है। लोकोत्तर पर्व जो होते है, वे आत्म-शुद्धि के लिए ही होते है। पर्युषण पर्व भी लोकोत्तर पर्व है।

इस विशिष्ट पर्व के मधुर क्षणों में सबसे पहले चित्तशुद्धि पर ही ध्यान देना चाहिये। क्योंकि चित्तशुद्धि पर ही हमारे जीवन की शुद्धि आधारित है। चित्तशुद्धि किस प्रकार से हो? इस विषय में "अध्यात्म-कल्पद्रुम" मे कहा गया है :—

"परहितचिन्ता मैत्री, परदुःख विनाशिनी करुवा।
पर सुखतुष्टिर्मुदिताः परदोपोपेक्षणमुपेक्षा ॥

भावनाएं चार है—मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा। मनुष्य के जीवन के उत्थान और पतन उसके अपने ही विचारों पर आधारित है। चित्त-शुद्धि के लिये विचार शुद्धि आवश्यक है। क्योकि जैन परंपरा की समुच्चता और समुज्जवलता का जन्म अन्तःकरण के संशोधन में से हुआ है। विचार-शुद्धि का प्रशस्त मार्ग ही इस भावना योग में आचार्य ने बताया है। सबसे पहली भावना है, 'मैत्री भावना'। मैत्री क्या है? संसार के समस्त-जीवों के प्रति मित्रता रखना। अपने स्वार्थ को छोड कर परार्थ का विचार करते रहना ही वस्तुतः मैत्री-भावना है। दूसरी भावना है—करुणा भावना। संसार के दीन-हीन और दुःखी जीवों के दुःखों को दूर करने की भावना को 'करुणा भावना' कहते है। संसार के सुखी जीवों के सुखो को देख कर ईर्ष्या न करके प्रसन्नता व्यक्त करना ही 'मुदित भावना' है। दूसरों के दोषों की ओर ध्यान न देना ही 'उपेक्षा भावना' है। इन चार भावनाओं के चिन्तन एवं मनन से चित्त के विकार-द्वेष, क्रूरता, ईर्ष्यादि दोष नष्ट हो जाते है। जो मनुष्य यह चार भावना युक्त अपने जीवन की क्रिया करता हो उसमें स्वार्थ बुद्धि या पर वंचना कैसे हो सकती है? चित्त विकारो के उपशमन के लिये इससे बढ़कर अन्य अवसर कौन सा मिलेगा? आलस्य तथा प्रमाद का त्याग करके धर्म की साधना के लिये सज्ज (उद्यत) हो, यह पावन कारी सन्देश लेकर "पर्युषण पर्व" आपके द्वार पर आया है।

स्वर्गस्थ मुनि पुगंव आगम प्रभाकर श्री पुन्य विजय जी महाराज

[अपने पिता की अकाल मृत्यु के बाद १४ वर्ष के बालक मणि लाल ने अपनी २७ वष की युवावय मे वैधव्य को प्राप्त मातृ श्री माणक बेन के साथ छाणी (गुजरात) मे दीक्षा ग्रहण की आप श्री बने पुय विजय जी और आपकी मातृ श्री बनी साध्वी रत्न श्री जी। आज दोनो ही इस ससार मे नही है पर इनके अमर काय हजारो हजार वष तक विद्वानों द्वारा याद किये जावेगे।

आगम प्रभाकर बाल ब्रह्मचारी, लम्बे दीक्षा पर्याय वाले, सयम की आराधना मे मग्नचित, ज्ञानवृद्ध, और तपोवृद्ध स्थविर थे। अपनी स्वय की तबीयत की परवाह किये बिना उन्होने पाटण, जैसलमेर, अहमदाबाद वगरा स्थलो के जैन भण्डारो की हस्तलिखित प्रतो को व्यवस्थित कर अमूल्य कार्य किया है। असह्य गर्मी म सर पर गीला कपडा लपट कर जल जलते टीन के पत्रो के नीचे भर दोपहर मे बैठ कर काम करते अनेको ने इन्हे देखा है। आप श्री का हाल ही मे बम्बई नगर मे स्वर्ग वास हुआ है। आपके स्वग वास पर सारे भारत के विद्वानो और जैन सघों ने शोक व्यक्त किये है व इसे कभी न भरी जाने वाली रिक्तता माना है। जयपुर के सघ ने भी इस सम्बन्ध मे उचित कतव्य का पालन करते हुए शोक सभा व शोक प्रस्तावादि पारित किये है। जयपुर सघ के इस वार्षिक मुख पत्र के द्वारा हम महान मनिषि के प्रति हार्दिक श्रद्धाजली प्रस्तुत करते हैं साथ ही पहले उन्ही के शब्दो मे उनके उद्गार और फिर कुछ सम्पर्क मे आये हुये गुरजनो एव विद्वानों के सस्मरण प्रकाशित कर रहे हैं। उनके उद्गार उनकी विचार धारा का बोध कराने के लिए पर्याप्त है। "जिन सदेश" के सौजन्य से प्राप्त सामग्री के लिये हार्दिक आभार सम्पादक]

उद्गार

"किसी विषय का लगातार अभ्यास करने का मेरे जीवन मे बहुत कम अवसर मिला है। वर्षो तक एक विषय का ऐकाग्र चित मे अध्ययन किया होवे और फिर प्राचीन प्रते बाँचने का या प्राचीन ग्रथों का सशोधन का काम शुरु किया होवे ऐसा कभी बना नही।

चाह पूव सस्कार कहो या बडो की कृपा कहो चाहे ज्ञानावरणीय कम का क्षयोपशम कहो। बडे रूप मे विद्याभ्यास और शास्त्र सशोधन का काम साथ-साथ चलता रहा है, और काम काम को सिखाता है। इसी प्रकार शास्त्रों का वाचन सशोधन करते-करते नये-नये विषयो का ज्ञान मिलता रहा है।'

"जीवन जीने के तीन प्रकार है तुम स्वय ज्ञानी बनो, व ज्ञान सम्पादन करो, अगर क्षयोपशम न होवे तो ज्ञानी की निश्रा मे रहो, इसके लिये भी अनुकूलता न होवे तो ज्ञानियो को पूछकर उनकी सलाह लेकर जीवन यात्रा करो तो पूर्णता तरफ पहुचने मे एक दिन जरूर सफलता मिलेगी।"

"पक्षराग, मतभेद परिचया, विकथा आदि से हमेशा दूर रहो। गभीरता साधु का आभूषण है और क्षमा भाव साधुता का प्राण तत्व है।'

—श्री पुण्य विजय जी म०

उदार चेता पूज्य आगम प्रभाकर जी ...

(सा० श्री निर्मलाश्री जी एम.ए. सा.)

सताइस वर्ष पूर्व मेरे पूज्य माता-गुरुदेव के साथ यात्रा करते हुये पाटन जाने का योग बना, वहां दीर्घसयंमी, ज्ञानोपासनारत और प्रतिभा सम्पन्न आगम प्रभाकर पूज्य पूण्य विजय जी महाराज साहब की विद्वता का गुणगान सुनकर दर्शन करने की अभिलाषा जागृत हुई। साथ ही कुछ संकोच भी होने लगा कि ऐसे महान विद्वान व्यक्ति दूसरे समुदाय के व्यक्तियों के साथ मन से बात भी करगे या नहीं परन्तु प्रथम दर्शन में ही विद्वता के साथ उनकी निरभिमान वृत्ति, स्पष्टता और उदारताही सद् गुणों का अनुभव हुआ। इससे ही बाल-युवा-वृद्ध-और विद्वान किसी भी व्यक्ति को उनका सानिध्य प्रेरणा दायक और आनन्दप्रद बनता था।

पच्चीस वर्ष पूर्व पाटण निवासी श्रेष्ठि लल्लुभाई गोपालदास की पुत्री सूश्री मंगु बहन की संयम ग्रहण करने की अभिलाषा जागी। इनका कुटुम्ब ज्ञानार्जन व व्याख्यान आदि हेतु सागर के उपाश्रय जाता था, इससे उस समुदाय के साधु साध्वीयों के साथ उनका निकट का परिचय होना स्वभाविक था। दुसरे समुदाय की साध्वी जी के पास दीक्षा लेने कि भावना होने से एक विसंवाद खड़ा होगया। कितने ही व्यक्तियों की इच्छा थी कि मंगु बहन को दूसरे समुदाय मे दीक्षा नहीं लेनी चाहिये। उन्होंने अपने अन्तर की यह व्यथा पूज्य पुन्य विजयजी महाराज सा. को कह डाली। 'गुरुदेव ! इस समुदाय में हमेशा ज्ञानादि आराधन करने वाली दीक्षार्थी बहन अन्यत्र दीक्षा लेवे, क्या यह उचित है ? जो आपको दीक्षा देने के लिये कहाजावे तो आप नाही कर देना, दूसरी जगह दीक्षा लेने पर यह आपके दर्शनों के लिये भी नही आ सकती "श्री आगम. प्रभाकरजी ने उन व्यक्तियों को तुरत प्रत्युत्तर दिया" मैं ज्ञान की आराधना को मानता हूँ, सम्प्रदायिकता में नही मानता, ज्ञानादि की उपासना के लिये स्वकल्याण कारी किसी भी समुदाय में दीक्षित होवे और वंदनार्थ आवे या नहीं इसमे मुझे क्या बाधा हो सकती है ? दीक्षाभिलाषी योग्य व्यक्ति को उस समुदाय के आचार्य की कथनानुसार दीक्षा देना हर साधु का कर्तव्य है।

पूज्य आगम प्रभाकर जी का ऐसा स्वभाविक एवं स्पष्ट उत्तर उनकी अन्तर की उदारता का अपूर्व परिचायक है। इस तरह की स्पष्टवादिता सर्वत्र दुर्लभ है।

अनेक विद्वान, पंडित एवं शोध कार्य के विधार्थी इनकी विद्वता का लाभ लेने इनके पास आते ही है पर मैंने ऐसे अनेक साधु साध्वीयों को जो उनके समुदाय के नही है दर्शनार्थ आते देखा है। साथ ही उनके सम्प्रदाय के न होवे ऐसे कई व्यक्तियो को आवश्यक पुस्तके एवं उचित परामर्श देते मैंने देखा है। एक बार एक पंडित जी मुझसे मिलने आये उनको अपने निबंध की तैयारी के लिये कुछ आवश्यक पुस्तकें देखने की अभिलाषा थी। मैंने इन पुस्तकों हेतू आगम प्रभाकरजी के पास होने की संभावना बतलाई। मैंने पंडित जी को प्रथम बार ही देखा था और पंडितजी ने गुरुमहाराज के पहली दफा ही दर्शन किये थे। पंडितजी ने आवश्यक एवं अलभ्य पुस्तको में से नोट लेकर अत्यधिक प्रसन्नता जाहिर की।

वि० स० २०२२ के ग्रीष्मावकाश में S.S.C से M.A तक की बहनो के लिये अहमदाबाद में मे 'संस्कार-अध्ययन-सत्र' का आयोजन हुआ। इसी तरह २०२३ में भावनगर व २०२४ में फिर अहमदाबाद मे सत्र का आयोजन हुआ। पूज्य आगम प्रभाकरजी ने इन सब सत्रो में अपना अमूल्य समय निकालकर बहीनों को यथोचित उपदेश एवं मार्ग दर्शन दिया तथा समापन सभारंभ में पधारे एवं इस प्रसंगपर कन्याओं के वक्तव्य पर भी अरुची नहीं दरसा कर उनके लिये प्रेरणा रुप बने।

हिंगणघाट में श्रेष्ठिवर्य वंशीलाल जी कोचर के बगले उपधान तपनिमित माला-परिधान महोत्सव था। इस अवसर पर पूज्य म० सा० को विनती की गई कि मध्य प्रदेश में अलभ्य उच्चकोटी के शास्त्र की प्रतियों का एक प्रदर्शन किया जावे तो जनता को अच्छा लाभ-मिले। पूज्य आगम प्रभाकरजी ने

स्वय के २ पडितो के साथ कितनी ही प्राचीन दुलभ प्रतिया व ग्रन्य सामग्री भेजकर जनता को इनके दशन का महान लाभ प्रदान किया।

पूज्य श्री आगम शास्त्रो के ममन विद्वान थे, उनकी आगम विषयक धारणाय सर्वाधिक प्रमाणिक और अनेकात दृष्टिकोण से अवाधित थी आगम विषयक जटिल प्रश्नो का समाधान करने की उनकी अदभुत क्षमता थी। इसी कारण साध्वी जी महाराज के व्याख्यान देने आदि विषयो मे उनकी दृष्टि स्पष्ट थी। उनके समुदाय के आचाय वयसाध्वी सस्था को तयार कर स्व एव पर समुदाय की साध्वी श्री महाराज को अपने समक्ष व्याख्यानादि कराने मे स्व-हीनता की भावना का कदापि अनुभव नहीं करते हैं, किन्तु भगवान के शासन के चार सघ मातृरूप महत्वपूर्ण सघ हैं ऐसा मानते है और उनके उत्कर्ष मे सवका उत्कष अनुभव करते हैं।

आवता भव मे मुझे ऐसा कडक मे कडक गुरु मिले जिससे

(मुनि श्री यशोविजय जी महाराज)

तब मं वालकेसर (वम्बई) के उपाश्रय मे था, मुनि श्री पुय विजयजी महाराज भी वहीं विराजते थे।

रात को बारह बजे होंगे। मैं और मुनि श्री पुज्य विजयजी दोनो आगमो की अवचूर्णि के सम्बध मे ज्ञान गोष्ठि कर रहे थे। इसी प्रकार की ज्ञान गोष्ठिया आधीरात और इससे भी वाद तक हमने कई बार की है। परन्तु ज्ञान चर्चा की यह बैठक मुझे सदव याद रहगी। मुझे तब क्या खबर थी कि इस ज्ञान गोष्ठि के पीछे फिर कभी भी ऐसी गोष्ठी नही होगी।

हमारा यह वार्तालाप पूरा होने पर मैंने अपने सहृदय मित्र मुनिजी से कहा "मं कल सवेरे यहा से विहार कर मेरे स्थल पर जाऊगा, कदाचित वहां से घाटकोपर जाने का बने तो अपने को वापस मिलते २०-२५ रोज लग जावेगें। और यदि दहिसर जाने का बना तो दो महने लग जावेगे इसमे अब म जल्दी नहीं मिल सकू गा।

मेरी बात सुनकर मुनि जी थोडी देर गम्भीर मौन मे उतर गये। थोडी देर वाद गम्भीर भाव से धीमी आवाज से उन्होंने वडो विनम्रता से कहा "तुम मेरे आत्मीय जन हो इसलिए कहता हूँ कि जन्मान्तर के क्षयोपशम से ज्ञानोपासना तो मे थोडी बहुत कर सका पर अमुक आचार पालन मे मैं कमजोर ही रहा हूँ ?

इसलिये म प्रार्थना करता हूँ कि आवते भव मे मुझे कडक से कडक गुरु मिले और सही रीत आचार पालन कराने के लिये मेरे पर सख्ताई रखे जिससे ज्ञान की जमे आचार पालन मे भी शिथिल न रहूँ। इस प्रकार की प्रार्थना मेरे लिये अपने अ त करण से जरूर करना" मैंने दोनो हाथ जोडकर कहा "आप इतने सजग हो यही आपकी महानता है। मेरे लिये तो यह अत्यन्त आनन्द की बात है। अपने आत्मीय जन तरीके निखालस भाव से आपने जो आदेश किया है उसका मं जरूर पालन करू गा"

ऐसी अ तरग की बाते हमारे वीच होती रहती थी इसलिये मैंने समय देखकर आप श्री को विनती की ' इस सेवक ने कई वार आपसे विनती की है तो भी आज फिर यह विनती करता हूँ कि आप दूसरी सब बातें गौण समझ कर समय का अधिक से अधिक उपयोग आगम प्रकाशन को वेग मिले इस हेतु करने का ही लक्ष्य रखाव मेरी यह प्रार्थना आप स्वीकारोगेगा।

इसके जवाव में आप श्री ने फरमाया "भाई! तुम्हारी लागणी मेरे ध्यान से बाहर नहीं है। आगम का काम तो मेरे मन म लगा हुआ ही है पर मुझे सच कहने दो तो तुम मेरे साथ रहो तो इस कार्य को जल्दी सम्पन्न होने मे काफी वेग मिलेगा।"

और मैने कहा ' फिर मिलू गा तब इस सम्बन्ध में विचार करगी"

सर्व श्रेष्ट विधान मुनि

(लि० मुनि श्री जिन विजय जी)

श्री पुय विजय जी महाराज का अन्तर और वाह्य दोनो दृष्टियो से समान रूप में निर्मल, निर्व्याज, विशुद्ध, अनाडवर और सत्व गुण परि-

पूर्ण जीधन का मै साक्षी हूँ। इनके जीवन का एक मात्र परम लक्ष्य ज्ञान की उपासना करने का रहा। इन्होने न कभी किसी तरह की पदवी प्राप्त करने की अभिलाषा की न तो कभी किसी संघ या समाज द्वारा सम्मान प्राप्त करवाने की आकांक्षा रखी। इन्होंने कोई धनवान को स्यंय का खास अनुरागी बनाने की न कभी अभिलाषा बताई न कभी स्वय के शिष्य बनाने की भावना व्यक्त की। वाह्य आचार की दृष्टि से भी वर्तमान साधु समाज में मै इनको श्रेष्ठ साधु तरीके मानता रहा हूँ। साथ ही परम ज्ञानोपासक तरीके भी मै इनको सर्वश्रेष्ठ विद्वान मुनि समझता हूँ।

मानवता की मूर्ति—

(मुनि श्री पूर्णानन्द विजय जी)

आगम प्रभाकर मुनिराज श्री पुन्य विजय जी महाराज मानवता की मनो मूर्ति थे कारण इन महा पुरुष के आत्मीय जीवन मे अकृत्रिम रूप में विकसित दयालुता सहिष्णुता, अस्तिवता और स्यादवाद जैसी गुण परम्परा स्पष्ट रूप मे दिखाई देती थी।

जैसे कि—(१) दयालुता के कारण अजातशत्रु युद्धिष्ठर की जैसे जैन जैनतर स्थानवासी, तेरापंथी, दिगम्बर और खरतर गच्छ के मुनियो का तथा उनके आगे वालो का प्रेम सम्पादित कर सके थे।

(२) सहिष्णुता के कारण स्वयं के घर जैसे सम्प्रदाय तरफ से होने वाले प्रहारों को स्वस्थता पूर्वक सह सके थे।

(३) आस्तिकता के कारण जो स्वयं के शरीर की और सुख की परवा किये वगैर सारा जीवन उन्होने जैनागमों की सेवा करने मे ही पूरा किया था।

बन्धन टूट्या—

—डा० पद्मनाभ जैनी

अेन आर्वर यु० एस० ऐ०—

मुनिराज श्री पुन्य विजय जी के दर्शन का प्रथम अवसर १८-२० वर्ष पहले मिला था तब मैं अहमदाबाद मे पूज्य पं० श्री सुखलाल जी का अन्तेवासी था और उनके साथ मुनिराज के दर्शन करने गया था।

मेरा जन्म दूर दक्षिण में दिगंम्बर सम्प्रदाय में हुआ था और विदर्भ की दिगम्बर जैन गुरुकूल में पढ़ा था इससे दिगम्बर सम्प्रदाय के संस्कार मेरे में दृढ़ थे। अहमदाबाद जैसे श्वेताम्बरो के महान नगर में रहते हुये भी वहां उनके विशाल जिनालय और उनके मुनिराजो के सानिध्य मे आने का मन ही नही होता था। पूज्य पंडित जी भी इस ओर से उदासीन थे। इस पर भी मैने उनके

मुख से एक जैन साधु की भर पेट प्रशंसा सुनी और वे मुनिराज थे मुनि पुण्य विजय जी।

पूज्य पंडित जी और मुनिराज मिलते जब इन दो अनगारियों का धर्म वात्सल्य देखकर कोई भी प्रभावित हुये बगैर रहता नहीं। ऐसे प्रसंग पर 'मित्ति मे सव्व भूएसु' के आर्ष वचन को मूर्तिमंत करने वाले मुनिराज जी का प्रसन्न व्यक्तित्व मैंने देखा है और वह आज भी मुझे याद है।

जैन धर्म में साधु के लिये जो प्रशम, विरति आदि जरूरी गुण गिने जाते हैं वे गुण इन मुनिराज के सुभग व्यक्तित्व में देखकर मेरी सम्प्रदायिकता की सारी दीवारें टूट गई।

किसी भी उपदेश के बगैर श्रमण समाज की मौलिक एकता का मुझे दर्शन मिला इसका श्रेय मुनिराज पुण्य विजय जी को है।

परम्पराओं में परिष्कार

(ले० उपाध्याय कवि अमर मुनि जी)

सादड़ी सम्मेलन में भी जब कभी आगम प्रभाकर मुनि श्री पुण्य विजय जी हमारे पास आते थे तो सभी वरिष्ठ मुनियों के सामने हम उन्हें अपने आसन पर बिठलाया करते थे। कुछ साथी मुनियों ने कहा भी—'यहां तो कम से कम रहने दो"। मैंने उनसे कहा—बस, यही नीति तो मेरे पास नहीं है। जो वहां हूं वही यहां हूं—जो यहां हूं, वही वहां हूं। जो एकान्त में है वही प्रकट में है।"

"वैचारिक एकता की दृष्टि से मैंने यह सुझाया था कि—'कम से कम श्वेताम्बर सम्प्रदायों के आगमों का एक सर्वमान्य संस्करण तैयार होना चाहिये। पाठों में एकवाक्यता रहे और जहां अर्थ भेद हो वहां तीनों सम्प्रदायों की दृष्टि का उल्लेख कर दिया जावे। आगम प्रभाकर मुनि श्री पुण्य विजय जी भी मेरी इस योजना पर बहुत पहले से ही सहमत थे और उन्होंने अहमदाबाद आने का आग्रह भी किया। पर विकट समस्या तो यह है कि स्थानक वासी सम्प्रदाय के अधिकांश परम्परा वादी मुनीजन इस पर एक मत होना तो दूर, इन विचारों का मूलोच्छेद करने पर ही तुले जाते हैं।"

(पृष्ठ ३ का शेष)

उनका स्वयं का कल्याण भी नहीं होता। और पीछे तो समाज के प्रति उनका उपेक्षा भाव भी बढ़ता जाता है।

इसलिए इस सम्बन्ध में कार्यकर्ताओं को संस्था व अपने स्वयं के हित में विशेष जागरूक रहना चाहिए। संस्था में कार्यकर्ता होकर धर्म और समाज की सेवा का लक्ष्य लेकर हम चलते हैं और इससे कर्मों की निर्जरा व सुकृत के उपार्जन की हमारी भावना फलवती होती है। पर सेवा के लक्ष्य के बजाय ज्यों ही हमारी वृत्ति सत्ताधारी की बनती है वैसे ही यह क्षेत्र कर्म बंध के कारण रूप बन जाते हैं।

अतः हमारी कथनी के मुजब करनी हो सके तो ही हमारी आत्मा का कल्याण भी होगा और नैतिकता का प्रभाव चारों दिशाओं में स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगेगा।

इस प्रकार भगवान महावीर ने उपदेश किसी व्यक्ति विशेष के लिए नही दिया, अपितु समस्त मानव जात के लिए दिया है, किन्तु उसका पालन प्राय सभी व्यक्ति पृथक् पृथक् दृष्टिकोण से करता है, क्योंकि आचरण समान होने पर भी परिणाम पृथक् होता है आज भी संसार मे ऐसे अनेक व्यक्ति है, जिनका दान देना तो मानो स्वभाव और उसमे भी अहं का पोषण नही, इनसे भी अधिक भावना वाले विरले व्यक्ति ऐसे होते हैं जो स्वार्थ त्याग करके भी परमार्थ करते हैं, स्वयं बिगड के भी दूसरो को बनाने की भावना रखते हैं, स्वयं भूखे रहकर भी दूसरो को भोजन कराते हैं, ऐसे व्यक्तियों का आधिक्य नही होता, कवचित ही होते है।

इस प्रसंग के अनुकूल आचरण करने वाले सन्त फ्रांसिस की जीवन गत एक घटना आंखों के सामने मूर्तिमान बन कर आती है, और हृदय में यही भावना उत्पन्न होती है कि अरे इतना उदार हृदय, इतनी करुणा इतना त्याग । आश्चर्य ! आश्चर्य !! आश्चर्य !!! किसी समय इटली देश के सन्त फ्रांसिस एक ग्राम से दूसरे ग्राम जा रहे थे रास्ते मे कांटे, कंकर, पत्थर, लगने से उनके पावो मे पीडा हो रही थी, इस अवस्था का अनुभव जब उनके किसी एक मित्र ने किया, तो उसने सोचा अरे, यह यात्रा करने के लिए निकले हैं, किन्तु इस प्रकार भ्रमण इनका सुखद नहीं होगा। अनेक परेशानियां होगी, यह सोच कर तुरन्त वह अपने घर गये, आवश्यक सामान से युक्त एक अच्छा घोडा देकर मित्र के अनुकूल आचरण का परिचय दिया। सन्त फ्रांसिस भी उस पर बैठकर प्रस्थान कर गये। आगे जाने पर एक वृद्ध को देखा, जिसका शरीर वृद्धत्व व निधनता का परिचय दे रहा था, उसके साथ मे एक युवती भी साथ थी।

सन्त फ्रांसिस ने निकट मे आने पर घोडे से उतर कर शिष्टाचार पूर्वक प्रश्न किया कि बाबा ! इस अवस्था मे यह पद यात्रा क्यो और साथ में यह युवती कौन ? उस वृद्ध ने उत्तर दिया कि भाई मै लडकी के श्वसुराल गया था, लडकी को छोडने, किन्तु मेरे जंवाई जी कह रहे थे कि आप मुझे एक घोडा दीजिए, अन्यथा मै आप की पुत्री को नहीं रखूगा, भी हर तरह से अपनी असमर्थता को बतलाते हुए विवशता व्यक्त की । किन्तु उन्होने मेरी एक न सुनी, और इन शब्दो के साथ वापिस लौटा दिया कि चले जाइये, अपनी लडकी को ले जाइये। अतएव मै लडकी को लेकर अपने घर की ओर जा रहा हूं, । यह बात सुनने के साथ उन सन्त ने सोचा अरे मुझसे भी अधिक आवश्यकता घोडे की इसको है, उसी क्षण स्वयं उतर जाता है, और सामान सहित घोडा उस वृद्ध बाबा को देकर पदल आगे चरण बढ़ा लेता है।

यदि हम इस उदाहरण मे मनोवृत्ति का सूक्ष्म अन्वेषण करें तो स्पष्ट रूप से दान की चरम सीमा दिखाई देती है, कीमत पदार्थ की नहीं किन्तु दूसरो के हित के लिए अपने स्वार्थ त्याग की है। यह सर्वोपरि दान है, । अतीत के इतिहास में अनेक ऐसे पृष्ठ है जो हम इन भावो को प्रेरणा देने में सक्षम है क्योंकि वे स्वयं इन भावनाओ की प्रतिमूर्तियां थी उदाहरण के रूप में 'हरिश्चन्द्र, दधीचि, शिवि एवं मेघरथ आदि के जीवन के अनेक ऐसे उदाहरण है, जिन्होने परोपकार के लिए स्वार्थ व परिवार का भी त्याग कर दिया, किन्तु दान के वास्तविक स्वरूप का अद्वितीय परिचय दिया।

ले० गुरु विचक्षण चरणमधु मणिप्रभा

"भारतीय परम्परा में अनेक अंध-विश्वास"

भारतीय परंपरा में अनेक ऐसे अंध विश्वास है, जिन्हें उखाड़ना आसान नहीं, प्रत्येक व्यक्ति के वश का काम नहीं। जो प्रबुद्ध पीढ़ी है उसे ऐसी प्रवृत्तियां अखरती है क्योंकि उसके पास चिंतन के लिए मस्तिष्क है, सोचने के लिए प्रतिभा है, समझने के लिए शिक्षा है इसलिए ऐसी प्रवृत्तियों के प्रति उपेक्षा ही नही, अपितु उन्मूलन की भावना उत्पन्न होती है. किन्तु प्राचीनता का व्यामोह एवं शिक्षा का अभाव. इन दो कारणों के सामने प्रयास मे सफलता की संभावना अत्यल्प रहती है। अंध परंपराओं में सैकड़ों प्रवृत्तियों का समावेश है। उनमें से हम इस समय जिस प्रवृत्ति के विषय में विचार करने जा रहे हैं उसका नाम है 'श्राद्ध'।

श्राद्ध शब्द अपने आप में अति उत्तम है। इसका सत्य अर्थ व्याकरण के अनुसार व्युत्पत्ति करने पर प्रकट होता हैं किन्तु वर्षो से इस शब्द का अर्थ यह प्रचलित रहा है कि अपने सम्बन्धी की मृत्यु के उपरांत अन्य किसी व्यक्ति को भोजन कराना। उसमें भी विशेष रूप से ब्राह्मण जाति के व्यक्ति को भोजन कराना सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। भोजन कराना जितना गलत नहीं किन्तु उससे भी अधिक गलत है उसके पीछे की जाने वाली भावना।

भारतीय जन-मानस में यह भावना व्याप्त है कि ब्राह्मण को जो भोजन कराया जाता है वह मृत् व्यक्ति को उपलब्ध होता है।

इस विषय को जब हम चितन की गहराई में ले जाते हैं, सत्यान्वेषण की खोज करते हैं, तो हमें उत्तर के रूप में यह प्रतीति होती है कि यह सत्य, तथ्यहीन एक अंध परंपरा है, जिसका अनुकरण अशिक्षित प्रजा करती आ रही है क्योंकि उसके पास सोचने समझने की शक्ति की अल्पता होती है, साथ ही प्राचीन परंपरा के प्रति इतनी उच्च भावना होती है कि उन प्रवृत्तियों के विषय में सोचना और अपनी तरफ से उन प्रवृत्तियों के प्रतिकूल भावनाओं को जन्म देना पाप मानते है। इसीलिए अभी तक इसके उन्मूलन के लिए प्रयास नहीं होता दिखाई देता।

अब हम अपनी बुद्धि के आधार पर सोचें तो यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं की व्यवस्था स्वयं ही करने में सक्षम है, जन्म से मरण तक की प्रत्येक प्रक्रिया उसकी स्वतंत्र है; उसके पूर्व पुरुषार्थ के फलस्वरूप साधन-सुविधाएं प्राप्त होती है, किन्तु फिर भी अनेक प्रवृत्तियां ऐसी है जिनके विषय में सब सम्मुख होने पर भी उसकी सहायता करने में अपने आप को असमर्थ पाती है। जैसे एक व्यक्ति जिसे सत्ता व सुख व संपत्ति तीनों उपलब्ध है। उसके एक इशारे पर दस व्यक्ति नाचते हैं उसके स्वस्थ करने के लिए प्रसिद्ध डाक्टरों की कतार लगी है। पत्नी व परिवार कतार बन कर के विवशता के भाव व्यक्त कर रहे हैं। सब चाहते हैं इसकी वेदना को अभी विलीन करदें, किन्तु है किसी की शक्ति की दस मिनिट के लिए उस प्रिय व्यक्ति की समस्त वेदनायें समेट कर स्वयं में समाविष्ट कर ले और उसे शांति

कराना चाहते हो तो ठंडे रहो. वह कितना
गर्म हो तुम ठंडे रहोगे तो उससे चाहे जैसे क
करा सकोगे।

× × ×

ताकत ठंडक में समायी हुई है, शान्ति
समायी हुई है। लोग ऐसा मानते हैं कि दुनिय
अधिक से अधिक ताकत अग्नि मे है वह स
जला डालती है पर मेरा मानना है कि अधि
अधिक ताकत पानी की है। अग्नि चाहे जि
ताकतवर हो पर उसको ठंडा करने वाला
है। जब आग लग रही हो उस वक्त आग बु
को फायर ब्रिगेड (पानी वाले) को बुलाया ज
है-धमरण भट्टी चलाने वाले लुहार को नही।

पानी इतना मृदु और कोमल है कि आ

क्षमापना पर्व

आज मानवता अशांति की ज्वाला से दग्ध है
भाई भाई के गले पर छुरी चलना मामुली कृत्य है ॥
जहाँ देखो अशान्ति की तुफानी लहरे चलती है।
'जीव जीव का भक्ष्य है यह भी थ्योरी चलती है ॥१॥
क्या ऐसे वातावरण में शीतलता मिल सकती है ?
क्या यह धरती स्वर्ग तुल्य बन सकती है ?
'वसुधैव कुटुम्बकम्' का स्वप्न साकार हो सकता है ?
क्या महा समर की बिभीषिका से बच सकते है ॥२॥
अगर क्षमापना के अस्त्र का उपयोग करते है।
तो एटम बम की धमक भी मिट सकती है ॥
अरब इजरायल युद्ध भी कपोल कल्पित हो सकते है।
विश्व युद्ध की घटनायें भी स्वपन बन सकती है ॥३॥
क्या क्षमा भुषित नर पुंगव मानव सहार करते है ?
क्या वीर योद्धा गण इतनें निमम बन सकते है ?
क्या मा बहनो की लाज फिर कभी लुट सकती है ?
क्या जातिवाद के विषाणु को जगह मिल सकती है ॥४॥
जिनके हृदय में दया प्रेम का अथाह सागर उमडता है।
जो सहिष्णु हैं हृदय में मानवता हिल्लोरे लेती है।
जो क्रोध मान माया लोभ पर विजय पाता है।
वह नर पुंगव ही क्षमा दुसरों को कर सकता है ॥५॥
जिस मनस्विने क्षमा का पर्व चलाया है।
आन्तरिक द्वेष मिटाने को प्रेरित करते है ॥
उसी के अंकुर है कि जैनी शान्ति प्रिय है।
अपनें सिद्धान्तों से ही हम फलते फूलते है ॥६॥
विज्ञान की खोजों को जिसे समय भुठलाता भी है।
शन्ति के प्रयत्न कर्त्ता को नोबल पुरस्कार देते है ॥
पर क्षमापना के जनक को ये पुरस्कार तुच्छ है।
जो समय की थाती व विज्ञान से भी सत्य है ॥७॥
क्या हमने इस अमुल्य रत्न को पहचाना है ?
क्या इसकी प्रकाश रश्मि घर घर में फैलाई है ?
इसका सौंदय बोध सम्पूर्ण विश्व में फैलाता है ?
फिर मानवता के महकते फूल खिलने लगते है ॥८॥
हम कितने भाग्य शाली है कि अतुल भंडार के स्वामि है।
पर बद किस्मत भी है कि इसे संभाल नही सकते है ॥
अगर इस पर्व की दिव्यता को पहचान सकते है।
तो धीरे धीरे धर्म के मर्म को समझ सकते है ॥९॥

पारसमल कटारीया

पर्युषण पर्वाराधन

लेखक:—चंदनमल नागोरी छोटीसादडी (मेवाड)

पर्युषण ऐसा पर्व हैं कि जिस मनुष्य को वर्ष भर में धर्माराधन का समय न मिलता हो उसको भी अंशात्मक आराधन का उदय होता है. प्रत्येक घर में धर्मानन्द होता है, पर्वो में यह पर्व प्रतिवर्ष आनन्द से मनाते हैं आराधन में श्रद्धा, भक्ति-भाव, तप, जप, दान-पुण्य, विशेष प्रकार से होता है. कल्पसूत्र का वहुमान पूजा, भक्ति-जागरण का दृष्य अपूर्व भक्ति से होता है, कल्प आराधन उत्साह से करते हैं. प्रारम्भ में अट्ठाई उत्साह मे पंचकृत्य का वर्णन आता है।

(१) अमारी पडह (२) साधर्मी वात्सल्य (३) परस्पर क्षमापना (४) अट्ठम तप और (५) चैत्य परिपाटी, इस तरह पाँच विषय की व्याख्या अट्ठाई के व्याख्यान में आती है, साथ ही वार्षिक कृत्य का उल्लेख भी आता है—

अथाष्टाह्निका पर्वाराधकैर्वेप-
कृत्यानि विधेयानोत्साह ॥ १ ॥

भावार्थः—अट्ठाई पर्वा राधक श्रावक वर्ग को वार्षिक कृत्य अवश्य करना चाहिये।
कहा है कि—

सघार्चादिसुकृत्यानी, प्रतिवर्ष विवेकिना।
यथा विधि विधेय्यानि, एकादश सितानि व ॥

भावार्थः-विवेकवान श्रावक को प्रति वर्ष संघ पूजादि ग्यारह कृत्य विधि सहित अवश्य करना चाहिये, तत् नामनानि—

(१) संघ पूजा (२) साधर्मी वात्सल्य (३) तीन प्रकार की यात्राऐं (४) जिन मन्दिर मे स्नात्र महोत्सव (५) देव द्रव्य वृद्धि (६) महा पूजा (७) धर्म जागरिका (८) श्रुत ज्ञान की विशेष पूजा-भक्ति (९) तप उद्यापन (१०) जिन शासन की उन्नति रूप प्रभावना और (११) पाप विशुद्धि-शोधि-आलोचणा, इस तरह से इस पर्व मे की हुई आराधना पाप निकंदन होती है।

इह च यथा हत, सकल कठिन कर्मकर्ममर्याणि।
इहाऽसूत्र विहित प्रभूत शर्पाणि धृत लोकोत्तर
नृमणि। मैश्री पर्युषणा पर्वणि समागते।
सकल सूरा सुरेन्द्रा संभूय। श्रीनन्दीश्वर नाम्नि
अष्टमे द्वीपे। धर्ममहिमन्नं कर्तु गच्छन्ति ॥१॥

भावार्थः-श्री जैन सिद्धान्तानुसार कठिन कर्म समूह को मर्म स्थानों के समूह को नष्ट करने वाला, इस लोक और परलोक में अप्यन्त सुख प्राप्त कराने वाला, पर्युषण पर्व के आने पर सर्व देव गण और असुरो इन्द्र मिल कर सुख के धाम नन्दीश्वर द्वीप आठवें द्वीप पर जाते है, वहां धर्मोत्सव कर आनन्द मनाते है।

पर्युषण के आने पर—

पद्मने सारणा वुत्ता अणायारस्स सारः।
चुक्काणि चोयणाभुजो, निट्ठुरं पडि जोयणा ॥१॥

भावार्थ-प्रमादी पुरुष को स्मरण कराना, अनाचारी को अनाचार से निवृत्त कराना, जो आचार से भ्रष्ट हो गये हों उनको अकार्य का बुरा फल वता कर भविष्य में कठिन कर्म का वध समझाकर धर्मवान वनाना और कठोर हृदय वाला हो, धर्म मार्ग से भ्रष्ट हुवा हो उसको धिक्कारना।

विशेष वर्णन करते कहा है कि स्वधर्मियो को धर्माऽनुष्ठान कार्य करने के लिए, पाच प्रकार के स्वाध्याय में लगाना और धर्म ध्यान सुख पूर्वक कर सके और आत्म ध्यान मे संलग्न रह सके।

जैन शास्त्रो मे स्पष्ट कहा है कि-धम साधन रुचि मे करना चाहिये, समकितधारी नर नारी क्रियायें रुचि से करते हैं, अरुचि विधान लाभ नही देता, रुचि के भी कई भेद बताये—(१) निसग रुचि (२) उपदेश रुचि (३) आज्ञा रुचि (४) सूत्र रुचि (५) बीज रुचि (६) अभिगम रुचि (७) विस्तार रुचि (८) क्रिया रुचि (६) सक्षेप रुचि और (१०) धम रुचि, इस तरह से रुचि की व्याख्या की गई यत —

न सुग्गुवए एसरुयई, आणरुईसुत्त बीजरुयमेव ।
अभिगम वित्थार रुइ, किरिआ सखे धम्मरइ ॥१॥

इसका कथन ऊपर लिखा है। इस तरह निज स्वभाव से जो सद्दते हैं उसको निसग रुचि कहते हैं, अत सारी क्रियायें शास्त्र श्रवण, पूजा, प्रभावना, तप, जप, दान-पुण्य सघ पूजा, स्वामि वात्सल्य रुचि से करना चाहिये। जिस क्रिया मे रुचि न हो वह लाभ नही देती। धर्माऽनुष्ठान का वर्णन करते "अध्यात्मसार" ग्रन्थ पृष्ठ २२० पर पर लिखा है कि—

विष गरोऽनुष्ठान, तद्धहेतुरमृत पयम् ।
गुम्मेवाद्यनुष्टानमिति, पचविध जगु ॥२॥

भावार्थ—अनुष्ठान के भेद का वर्णन करते कहा है कि विषानुष्ठान, गरानुष्ठान, अननुष्ठान, तद्हेतुअनुष्ठान और अमृतानुष्ठान इस तरह पाच प्रकार के गुरू सेवादिक अनुष्ठान का बयान है।

धर्म क्रियाऐ उत्तम अनुष्ठान मे करना स्वय की प्रकृति पर आधारित है।

"परोपकार के लिए स्वार्थ का त्याग"

अथवा

"दान की चरम सीमा"

भारतीय परम्परा के सभी धर्मों में दान का स्वरूप विवेचित है, हर व्यक्ति की दान में अभिरुचि भी रहती है, अन्तर इतना अवश्य होता है कि उसमें प्रवृत्तियाँ पृथक् पृथक् होती है। किन्तु दान देने की भावना का अभाव तो अत्यल्प मात्रा में ही उपलब्ध होगा, अमीर व गरीब कोई भी क्यों न हो, यथा शक्ति अवश्य दान देने की अभिलाषा रखते है कुछ परम्परायें ही ऐसी है जिनका त्याग उचितता का उल्लंघन समझा जाता है, और उसका त्याग होता भी नही वह तो सहज स्वभाव सा बन गया है। इसका अनुभव हमारी भोजन व्यवस्था मे ही प्रतिदिन होता है। जैसे प्रथम रोटी खाई नही जाती, गाय अथवा कुत्ते आदि को दी जाती है, यो यह एक साधारण प्रवृत्ति है, जिसके विषय में कुछ सोचने का प्रयत्न नही करना पड़ता। किन्तु यदि हम सोचें तो उसका परिणाम यही दिखाई देगा कि पहले दान देकर खाना। यह तो मैंने एक ही साधारण प्रवृत्ति का परिचय दिया है किंतु कहने का तात्पर्य यही है कि हमारे यहा दान प्रवृत्ति को सहज कर्तव्य मे समाविष्ट किया है।

आज भी प्रतिवर्ष हर जाति व समाज में हजारों लाखों का दान किया जाता है। जिसका परिणाम है अनेक धार्मिक स्थान, औषधालय, अनाथालय, शिक्षण संस्थान, एवं तृषा शान्त करने का स्थान आदि आदि।

इन कार्यों में अनेक व्यक्ति तो अपनी अभिरुचि से ही धन का व्यय करते है, अनेक ऐसे भी व्यक्ति होते है जो स्वतः इच्छा से नहीं देते किन्तु प्रेरणा से प्रभावित होकर देने लगते है। इस प्रकार पूरे देश की भावना नही प्रति शहर की भावनाओं का अवलोकन करेंगे तो हम को अनुभव होगा कि दान के नाम पर भारतीय जनता अपने धन का उत्सर्ग करना जानती है इसमें सन्देह नही।

दान देने की वृत्ति को विशेष रूप से उत्पन्न करने के लिए धन जन्य पदार्थों मे आशक्ति हटाने के लिये पैसे व व्यक्ति के बीच का जो सम्बन्ध है उसका विशेष रूप से विश्लेषण भगवान महावीर ने अपने अनेक धर्म ग्रन्थों में किया है, उन्होंने यही कहा कि प्राप्त सुख साधनों को केवल जीवन निर्वाह का साधन मानते हुए उसका स्वपर-हित उत्सर्ग करते रहो, एकत्रित करने की आकांक्षा न रखो, इसी विषय को अधिक स्पष्ट करते हुए उन्होंने दान के क्षेत्रों का निर्वाचन किया, और यह बतलाया कि इन सभी विभाजित स्थानों मे धन का व्यय करने से हमारे सभी धार्मिक स्थान व मानव समाज सन्नत रहेगा, शिक्षित बनेगा, किन्तु उसमें यह ध्यान रखने की आवश्यकता है, कि जिस समय जिस विभाग को अत्यधिक आवश्यकता हो उस समय उसी को सहयोग देकर पुष्ट बनाना चाहिए क्योंकि भरे को भरने से इतना लाभ नही जितना रिक्त को भरने से है।

"भारतीय परम्परा में अनेक अंध-विश्वास"

भारतीय परंपरा में अनेक ऐसे अंध विश्वास है, जिन्हें उखाड़ना आसान नही, प्रत्येक व्यक्ति के वश का काम नहीं। जो प्रबुद्ध पीढ़ी है उसे ऐसी प्रवृत्तियां अखरती है क्योंकि उसके पास चिंतन के लिए मस्तिष्क है, सोचने के लिए प्रतिभा है, समझने के लिए शिक्षा है इसलिए ऐसी प्रवृत्तियों के प्रति उपेक्षा ही नही, अपितु उन्मूलन की भावना उत्पन्न होती है. किन्तु प्राचीनता का व्यामोह एवं शिक्षा का अभाव. इन दो कारणों के सामने प्रयास में सफलता की संभावना अत्यल्प रहती है। अंध परंपराओं में सैकड़ों प्रवृत्तियों का समावेश है। उनमें से हम इस समय जिस प्रवृत्ति के विषय में विचार करने जा रहे हैं उसका नाम है 'श्राद्ध'।

श्राद्ध शब्द अपने आप में अति उत्तम है। इसका सत्य अर्थ व्याकरण के अनुसार व्युत्पत्ति करने पर प्रकट होता है किन्तु वर्षो से इस शब्द का अर्थ यह प्रचलित रहा है कि अपने सम्बन्धी की मृत्यु के उपरांत अन्य किसी व्यक्ति को भोजन कराना। उसमें भी विशेष रूप से ब्राह्मण जाति के व्यक्ति को भोजन कराना सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। भोजन कराना जितना गलत नहीं किन्तु उससे भी अधिक गलत है उसके पीछे की जाने वाली भावना।

भारतीय जन-मानस में यह भावना व्याप्त है कि ब्राह्मण को जो भोजन कराया जाता है वह मृत् व्यक्ति को उपलब्ध होता है।

इस विषय को जब हम चिंतन की गहराई में ले जाते हैं, सत्यान्वेषण की खोज करते हैं, तो हमें उत्तर के रूप में यह प्रतीति होती है कि यह सत्य, तथ्यहीन एक अंध परंपरा है, जिसका अनुकरण अशिक्षित प्रजा करती आ रही है क्योंकि उसके पास सोचने समझने की शक्ति की अल्पता होती है, साथ ही प्राचीन परंपरा के प्रति इतनी उच्च भावना होती है कि उन प्रवृत्तियों के विषय में सोचना और अपनी तरफ से उन प्रवृत्तियों के प्रतिकूल भावनाओं को जन्म देना पाप मानते हैं। इसीलिए अभी तक इसके उन्मूलन के लिए प्रयास नहीं होता दिखाई देता।

अब हम अपनी बुद्धि के आधार पर सोचें तो यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं की व्यवस्था स्वयं ही करने में सक्षम है, जन्म से मरण तक की प्रत्येक प्रक्रिया उसकी स्वतंत्र है; उसके पूर्व पुरुषार्थ के फलस्वरूप साधन-सुविधाएं प्राप्त होती है, किन्तु फिर भी अनेक प्रवृत्तियां ऐसी हैं जिनके विषय में सब सम्मुख होने पर भी उसकी सहायता करने में अपने आप को असमर्थ पाती है। जैसे एक व्यक्ति जिसे सत्ता व सुख व संपत्ति तीनों उपलब्ध है। उसके एक इशारे पर दस व्यक्ति नाचते है उसके स्वस्थ करने के लिए प्रसिद्ध डाक्टरों की कतार लगी है। पत्नी व परिवार कतार बन कर के विवशता के भाव व्यक्त कर रहे हैं। सब चाहते हैं इसकी वेदना को अभी विलीन करदें, किन्तु है किसी की शक्ति की दस मिनिट के लिए उस प्रिय व्यक्ति की समस्त वेदनायें समेट कर स्वयं में समाविष्ट कर ले और उसे शांति

की श्वास व निद्रा के लिए नीरोग बना दे। क्या सत्ता उनमें अपना प्रभाव व।ा सकती हैं? वेदना को वदी बना सकती हैं? ऐसे अनेक प्रश्न हैं जो व्यक्ति की कर्म शृंखला मे जकडे हुए हैं उनको करने की शक्ति व सामर्थ्य किसी व्यक्ति, पदार्थ व प्रशिक्षा मे नहीं। तब हम उस वृत्ति के विषय मे कमे विश्वास कर सकते हैं कि हमारे प्रिय व्यक्ति की मृत्यु के उपलक्ष्य मे कराया गया भोजन उसकी पेट पूर्ति करेगा, भूख शान्त करेगा, जब कि प्रत्यक्ष में भी ऐसा नही होता कि खावे कोई और पेट किसी अन्य का भरे। जब आप प्रत्यक्ष मे उन्हे अपनी शक्ति, सपति व सत्ता के बल पर सुरक्षित रखने मे समर्थ नही हो सके, तो भला एक यह विश्वास कैसा? और यदि ऐसा ही आपका दृढ सकल्प है कि मृत्यु के पश्चात् अवश्य उन्हे उपलब्धि होती है तो फिर इतनी सी ही व्यवस्था क्योकि किसी एक ही दिन भूख शात करना? मात्र इतना ही कर्त्तव्य शेष नहीं है? उन्होने पूरे जीवन की अर्जित सपत्ति आपको विरासत के रूप मे प्रदान की है तो आप कम मे कम उनकी प्रारभिक अवस्था की व्यवस्था तो कीजिये, क्योंकि अभी तो अन्य किसी शरीर मे उनका जन्म हुआ होगा अथवा अभी बचपन होगा, अतएव एक मकान, दस हजार खर्च व्यवस्था के लिए व एक परिवेश का व्यक्ति उनके शारीरिक उत्कर्ष के लिए, इतना काय तो उसके स्नेह मवध आदि मे अभिभूत होकर आपको करना ही चाहिये। सच मे यदि पूर्व भव की व्यवस्था करने मे व्यक्ति समर्थ होता तो स्वय ही लाखो रुपये साथ लेकर जाता किन्तु यह सर्वज्ञ दर्शन का माना हुआ एव वीतराग वाणी का दिखाया हुआ अखड सत्य है कि व्यक्ति स्वय के जीवन निर्माण मे स्वय ही पुरुषार्थ कर सकता है और फल भी स्वय ही प्राप्त कर सकता है। अन्य व्यक्ति उसके लिए कुछ नही कर सकता। कदाच् स्नेह मे अभिभूत होकर प्रिय की स्मृति मे अपने जीवन का बलिदान भी करदे फिर भी उसमे वह सामर्थ्य नहीं कि अपने प्रिय व्यक्ति की प्राप्ति कर सके। अतएव श्राद्ध परपरा का उन्मूलन आज के प्रबुद्ध युग मे होना अत्यन्तावश्यक है। प्रिय की स्मृति मे अच्छे कार्य करना प्रशसनीय सहपरिजनों का कर्त्तव्य क्षेत्र है जिसका पालन हर विज्ञ व्यक्ति का सहज कर्त्तव्य है कि अपने प्रिय के स्मरण के प्रतीक कार्य करावे, किन्तु उस कृत कार्य का फल उन्हे उपलब्ध होगा यह भावना नितान्त असत्य एव तथ्य रहित है। जिसका उन्मूलन आवश्यक है, आज के युग मे मे इन भावनाओ के पाव अब टिक नहीं सकते।

(श्री कान्ति सागर जी के प्रवचन से)

एक ऐतिहासिक कथा

जगत शेठ के घर की लक्ष्मी

ले० भीम जी भाई हर जीवन (सुशील), अनु. हीराचन्द वैद्य

वंगाल, विहार और उडीसा में किसी वक्त नवाबी शासन में जगत शेठ के नाम की आण वरती जाती थी। नवाव और सूवेदार जो रोज वदलते पर जगत शेठ का शासन दण्ड हमेशा अचल और स्थिर रहता। जगत शेठ का धन भण्डार भी कुवेर के भन्डार से क्या कम था। लक्ष्मी, वृद्धि और शक्ति के प्रताप से वंगाल विहार और उडीसा में जगत शेठ प्रान्त के भाग्य विधाता गिने जाते थे।

पर जगत शेठ के पूर्वज जो सबसे पहले वंगाल में आये, अत्यधिक गरीव थे। देश से केवल लोटा और डोर लेकर यहां आये थे। धीरे २ इनका व्यापार वढा-पहले कोई जानता भी नही था, अव वे ही सामान्य व्यापारी जगत शेठ की पदवी से विभूषित हुये।

हीरालाल और मोतीलाल दो भाई और इन दोनों भाईयों की पत्नियां वस यही जगत शेठ का मूल परिवार था दोनों महिलाओं का नाम क्रमशः तारावाई और ललितावाई था, सारे परिवार मे स्नेह भी भरपूर था। मोतीलाल और ललिता पर तारावाई का मातृवत स्नेह था।

तारावाई ने दोनों भाइयों को एक प्रतिज्ञा कराई थी कि वाहर से जव भी ये दोनों भाई घर में आवे कभी खाली हाथ न आवे'। और भी कुछ न वने तो सुखा तिनखला ही हाथ में लेकर आवे, पर खाली हाथ कभी न आवे। तारावाई पर अपार स्नेह होने से दोनों भाइयों ने हंसी जैसी यह प्रतिज्ञा हमेशा पालन करने की प्रतिज्ञा ली।

मोतीलाल कई वार इस प्रतिज्ञा को भूल कर खाली हाथ आ जाता तव तारावाई स्नेह से प्रतिज्ञा को पालन करने को समझाती कहती" मैं तुम्हें सोना चांदी लाने की कव कहती हूं-केवल घास का एक तनखला लेकर ही आवो पर खाली हाथ न आवो इतनी सी प्रतिज्ञा भी तुम मेरे मान के खातिर नही निभा सको तो मुझे कैसा लगे ? इस प्रेम पूर्ण उल्हना से मोतीलाल भविष्य मे ऐसी गलती नही करने का निश्चय करता।

एक दिन मोतीलाल घर आते वक्त आधे रास्ते पर विचार करता है कि मैं तो खाली हाथ चल रहा हूं-क्या लेकर चंलु इसी विचार में वह मार्ग पर वढता है और यकायक रुक रुक कर सोचता है आज भाभी को वरावर वनाऊगां-और यकायक उसके मुख पर हंसी दौड गई।

वात यह थी मार्ग के एक वाजू एक मरा हुआ सांप पडा था. एक मजवूत लकडी पर सांप का यह कलेवर उठा कर भाभी को अर्पण करने को वह आगे वढा।

तारावाइ ने मोतीलाल को दूर से आते देखा। उसने मरे हुये सांप को देख कर कहा इस तरह मसखरी होती है ? इस तरह मरा हुआ सांप भी कोई घर मे लाया जाता है ? मोती-

लाल यह सब समझता था पर उसे तो प्रतिज्ञा पालने का और भाभी को चिढ़ाने का एक बहाना मिल गया था। "भाभी के लिये खास भेंट लाया हू, खाली हाथ घर मे नहीं आना यह तो तुमने स्वय आज्ञा की है कडी धूप मे कितनी दूर से यह भेट ला रहा हू इसकी कल्पना तो करो" कह कर मोतीलाल ने कलेवर घर के बारणे पर रख दिया। ललिता तो यह दृश्य देख भी न सकी–मरे हुये साप का शरीर धूप मे चमक रहा था–इस चमक मे भयकरता थी, वह घबरा कर घर मे भागी।

ललिता की घबराहट ताराबाई ने देखी–उसका भी खून खौलने लगा जोर से चिल्लाई" अभी भी तुम्हारा छोकरापन नहीं गया-जाओ इसे कहीं बाड मे फेंक दो और हाथ पैर धोकर अन्दर आवो।

मोतीलाल ने भाभी का क्रोध पहिचान लिया, भाभी की नाराजी से डर कर कलेवर को उठा कर बाड मे फकने के लिये चला।

थोडा आगे बढा ही था कि भाभी की आवाज सुनाई दी "इसे वापस ले आओ मेरी भूल हुई है" वह वापस लौट गया।

ताराबाई के मुख पर से रोष अदृश्य हो गया था वे बोली "तुम्हे जो कुछ सूझा है इसमे भी विधाता का जरूर कोई सकेत होना चाहिये। खुशी मे साप लेकर घर मे आवो और इसे छत पर एक कोने मे रखदो"।

मोतीलाल ने सोचा यह तो केवल मजाक करने को इसे लाया था वह बोला "भाभी! यह भी कोई घर मे रखने की चीज है? थोडे समय बाद तो इसकी बदबू मे सारा मकान सड जावेगा, तुम कहो तो यहीं इसका अग्निदाह करदू"।

ताराबाई ने निर्णय दिया" तुम प्रतिज्ञा के लिये इसे लाये हो तो घट दो घटे इसे रहने दो बाद मे तुम्हारे को जचे जैसा करना"।

ताराबाई मानती थी कि कोई चीज निकामी नहीं होती अपने जिनको साफ निकम्मी चीज समझते हैं कभी २ वे ही इतिहास का निर्माण करने वाली वस्तु साबित होती है। ताराबाई की यह एक स्त्रियोचित मान्यता थी। श्रद्धालु हृदय की यह एक आम धारणा थी, सुख-दुख, अच्छा बुरा जो कोई आसानी से मिले उसको आदर देना-गन-गनाहट किय बगैर यह सब स्वीकार लेना यह ताराबाई की सरल प्रकृति का मुख्य लक्ष्य था।

मोतीलाल ने इसका विरोध नहीं किया उसने भाभी की आज्ञानुसार कलेवर को छत के एक कोन पर रख दिया और नीचे उतर आया।

दूसरे दिन करीमोनैसा नाम की बेगम का एक बहुत मुल्यवान हार खो जाने की बात सारे शहर मे फैल गई।

करीमोनसा बेगम नवाब मुरशीद कुली खा की खास प्रीतिपात्र बेगम थी। इस बेगम को खुश करने के लिये नवाब ने महल के ऊपर की छत पर विमाननुमा एक बगीचा बनाया था। भांति २ के फूलदार वृक्ष भी लगाये थे। मुगल शाहन शाह और नवाब सौंदय के प्रति आसक्त रहते ही थे।

यह महल गगा नदी के किनारे पर स्थित था–जल मे इस महल का प्रतिबिम्ब ऐसा मालूम होता था माना महल अपने सौंदय को देख कर इठला रहा हो।

जिस दिन यह हार गुम हुआ उस दिन बेगम विमान उद्यान मे बैठी वस्त्रालकार पहन रही

थी, इस अवसर पर वेगम की केवल दो दासियां वहा हाजिर थी। थोडी देर मे वस्त्र पहिन कर हार पहनेगी यह समझ कर वेगम ने वही हार एक तरफ रख दिया था।

उद्यान मे दासी पूर्वी राग में सुमधुर संगीत गारही थी, सव गायन में मस्त हो रहे थे–साज सज्जा समाप्त हो गई और नीचे उतरने का समय आ गया। पर वेगम व दासियों में से किसी को भी हार की याद नही आई। जव रात हो गई यकायक वेगम का ध्यान गले के आभूषण की ओर गया, हार को गले मे नही देख कर खोज प्रारम्भ हुई पर हार का कही पता न लगा।

आखिर नवाव मूरशीद अली खाँ ने घोषणा कराई कि खोये हुये हार का जो भी पता वतलादेगा उसको एक सौ अशरफी इनाम में दी जावेगी।

शहर कोतवाल व सिपाही गली २ में तलाश करने लगे, वे किसी भी तरह वेगम के हार का पता लगाने को कटिवद्ध थे।

नागरिको मे तरह २ की अफवाहे फैलने लगी, कोई कहता कोई आकाश परी हार ले गई है कोई कहता कहीं से लूट का आया होगा, आया जैसे ही चला गया–अव हार कभी आ सकता नही है।

दूसरे दिन सायकाल तारावाई किसी काम से छत पर गई–यकायक वह मंत्र मुग्ध हो गई। जहां कल मरा हुआ सांप पडा था वहाँ सर्प के आकार का सोने का हार पड़ा देखा। उसके ध्यान मे यह वात आई कि वेगम के जिस खोये हुये हार की चर्चा शहर में चल रही है–हो न हो यह वही हार होना चाहिये–यह वात तारावाई के ध्यान मे निश्चित जम गई। पर यह हार यहा कैसे आया इसका विचार आते ही भय से हृदय काप उठा।

नीचे कोठड़ी में आकर उसने तुरन्त हीरालाल और मोतीलाल को बुलाया। कहलाया कि वहुत जरूरी काम है जल्दी आवो।

थोडी देर मे दोनों भाई घर आये–तारावाई के हाथ में कीमती हार देखकर वे आश्चर्य चकित हो गये।

भाभी आपने कैसे वुलाया है ? मोतीलाल ने पूछा

हार की तरफ इशारा कर उन्होने कहा कि सांप के कलेवर के वदले छत पर यह हार मिला है। कल वेगम साहव के वगीचे में से जो हार खो गया था, वही यह होना चाहिये।

हीरालाल कुछ भी न समझ सका कारण उसे मोतीलाल द्वारा मरा हुआ सांप लाने की घटना की कुछ भी जानकारी नही थी।

मोतीलाल जल्दी घवराने वाला तो नही था, पर यह राजद्वारी मामला था ऐसे मामलो मे शिरोपाव भी मिल जावे या तो मृत्यु दण्ड मिलते भी देर न लगे। काफी देर तक वे विचार मग्न वैठे रहे पर उन्हे कुछ भी न सूझा।

आखिर तारावाई वोली "इसमे इस तरह मुंझाने की क्या जरुरत है, यह तो स्पष्ट भाग्योदय का सूचक चिन्ह है" ये शब्द दोनों भाइयो के लिए दरिया मे डूवते को तिनके के सहारा रूप वन गये। तारावाई ने प्रारम्भ से अन्त तक सारी घटना हीरालाल को वताई और अपनी कल्पना से यह भी वतलाया कि यह हार किस तरह आकाशी पर आया।

मोतीलाल ने तारावाई की वुद्धिमत्ता देखकर कहा "भाभी ! वास्तव में आप लक्ष्मी स्वरूप है। मै अव तक आपको पहिचान नही सका और वाल स्वभाव कई वार आपको परेशान भी किया" कह कर मोतीलाल भाभी के चरणों मे नमा।

(२)

नवाब साहब मुर्शीद-कुली-खा दरबार लगाय बैठे हैं हिन्दू, मुसलमान, सरदार, उमराव सब यथा स्थान जमे हुये हैं। पहरेदार मुख्य द्वार पर मुस्तैदी से पहरा दे रहे हैं।

अचानक नवाब की नजर कोने मे खड़े दो मारवाड़ी नवो युवको पर पड़ी, ये क्यों आये हैं ? यह प्रश्न नवाब के दिमाग मे आया।

इशारे से उनको पास बुलाया, और वे भी निजामी ढग से सलाम कर खड़े रहे।

हीरालालने स्वय का परिचय देते हुए कहा कि यह मोतीलाल मेरा छोटा भाई है हम लोग यहा व्यापार करके गुजर चलाते हैं। अपने पास के हार को बताकर कहा कि यह कैसे हमारे पास आया यह जानकर आप सबको अत्यधिक आश्चर्य होगा पर मेहरबानी कर इसकी सारी हकीकत हमे बतलाने का अवसर प्रदान करिये।

सारी सभा मे हार को देखकर हर्ष और आश्चर्य व्याप्त हो गया।

हीरालाल ने प्रारम्भ मे प्रतिज्ञा ली जब से, मरे हुए सर्प को लाने तक छत पर डाल देने तक का सारा किस्सा सुनाया फिर कहा अब मैं वह हकीकत बताता हू जो मेरे अनुमान से है देखी हुयी नहीं है। ऐसा लगता है किसी बाज पक्षी ने बगीचे से बेगम साहब का हार खाने की चीज समझ कर उठाया और उड़ कर उसे खाने की दृष्टि से कहीं बैठा है और सम्भवत वह हमारे मकान की छत रही है वहा मरे हुए साप का कलेवर देखकर हार छोड़ कर उसे लेकर उड़ गया है।

"सुभान अल्ला ! नवाब साहब यकायक बोल उठे दरबारियो ने भी इसकी पुनरावृत्ति की।

मैं तुम्हारी सारी बात स्वीकार करता हू, तुम्हारे सारे परिवार को धन्यवाद देता हू। तुम्हारे घर मे ऐसी असाधारण बुद्धिशाली गृह लक्ष्मी है उनको नमन करने की मेरी इच्छा होती है उन्हें मेरा नमस्कार कहना तथा व सौ अशर्फी इनाम के मगाया ये सौ अशर्फी गृह लक्ष्मी के चरणों मे मेरी ओर से भेंट करना और स्वीकार कराना।

सारी सभा नवाब के उद्गारो को सुन रही थी।

नवाब ने फिर बोलना प्रारम्भ किया 'चाहे आज मे मुसलमान हू पर एक दिन मैं भी हिन्दू था। हिन्दू माता-पिता का खून मेरी नाडियो में बह रहा है। मुझे मेरी हिन्दू माता याद आती है और मेरे को मातृ स्वरूपी हिन्दू नारी के चरणो मे अभिनन्दन अर्पण करने की भावना जागती है। मुर्शिदाबाद का यह तख्त भी माता के स्नेह के मुकाबले मुझे तुच्छ लगता है, मुझे ऐसा लगता है तुम्हारी गृहलक्ष्मी मानो मेरी माता का दूसरा अवतार हो ?"

इतने मे खजाची ने भी सौ अशर्फी की दो थली ला कर हीरा लाल को दी।

"अविवेक हो तो माफी बक्शावें, यह एक थली मे बगाल के नवाब के चरणो के पास रखता हू। हार के बदले इनाम मैं स्वीकार नही कर सकता, कारण इसमे मेरा कोई परिश्रम नही है, और बगैर परिश्रम का पैसा घर मे आवे तो वह कुटुम्ब की सुख-शान्ति और सद्भाव को हर लेता है। हा, किसी वक्त हम आफत में होवें और उस वक्त आपकी मदद की जरूरत हो तो आपके पास आ सकें यह परवानगी मिलनी चाहिये।

हीरालाल की नम्रता, निःस्पृहता को देखकर नवाब मसनद के पास से उठ कर हीरालाल के पास आया उसे शाबासी व धन्यवाद देते हुये नवाब ने कहा "चाहे कभी भी तुम्हारे लिये मेरा दरवाजा खुला रहेगा।

बंगाल, बिहार और उड़ीसा के नवाब का राज्यद्वार हमेशा के लिये खुला है यह सुनकर हीरालाल का हृदय नाच उठा। नवाब को एक बार फिर सलाम कर उन्होंने विदाई ली।

नवाब साहब ने दरबार वरखास्त किया पर एक व्यापारी की निःस्पृहता देखकर उनके अन्तर मे एक नया प्रकाश उदित हुआ। दरवारी भी मंत्र मुग्ध हो गये।

(४)

दिवाली में अभी एक दो दिन बाकी थे पर सारे शहर में इस पर्व के लिये अनोखा उत्साह था। चारों तरफ होने वाली तैयारियों की भनक नवाब के कान में पड़ी। उसने नौकर से पूछा यह कौन से उत्सव की तैयारी हो रही है ? "नामवर ! यह हिन्दुओ की दिवाली का उत्सव है।" यह सुन कर नवाब चुप रहे व अपने बाल्य काल का स्मरण कर वे विचार मग्न होकर बैठ गये। इतने मे नवाब का खास सत्कार कार रायरायान वहाँ आया। रायरायान ने नवाब के मुख पर गहरी चिन्ता की रेखाये देखी।

"मनुष्य स्वयं के भूतकाल की वात भूल सकता होता तो आज मैं इस मनोव्यथा से वच गया होता। ज्यों ज्यो मेरे को बाल्य काल याद आता है, उस वक्त के आनन्दोत्सव याद आते है त्यों त्यों मुझे यह गद्दी कांटों से भरी सेज जैसी लगती है" नवाव कह रहे थे और आँखों मे आंसू भर रहे थे।

"नामवर ! आप क्या कहना चाहते है ?" समवेदना का अनुभव करते रायरायान ने कहा।

"कुछ नही, मुझे जरा विचार करने दो ?" नवाब अपने अन्तर में खो कर न मालूम क्या क्या चिन्तन करने लगा।

नवाब मुरशीद अली खाँ अभी मुसलमान होते हुये भी जन्म से हिन्दु था। हिन्दु धर्म और रीति-रिवाजों के प्रति उसका वहुमान था। हिन्दु आगेवान उसके सलाहकार थे। उसकी उदारता और व्यवहार दक्षता से प्रभावित होकर दिल्ली के शाहनशाह ने इनकी बंगाल के नवाव तरीके नियुक्ति की थी। बंगाल, विहार में उम वक्त चांचीयों का बहुत जोर था। मुरशीद कुली खाँ ने उनका सफाया कर दिया था अपने नाम पर मुरशीदाबाद की स्थापना की थी इनके राज्य में हिन्दु मुसलमान का कोई भेद नही था।

थोड़ी देर चुप रहने के वाद नवाव ने रायरायान की ओर देखकर कहा "मेरा हुक्म है आज और कल दीवाली की रात्रि में किसी घर में दीपक न जले और इन दिनों मे सारे शहर मे जलते हो उससे भी ज्यादा दीपक राजमहल में जलाये जावे। नव वर्ष के प्रभात में शहर मे कही शहनाई न बजे, केवल राजमहल में यह वजे ऐसा इन्तजाम करो राजमहल को तोरण ध्वजा और पुष्पों से खूब सजाया जावें यह मेरा निजी हुक्म है।"

गंगा के किनारे से इमामबाड़े तक सारे मैदान में इत्र व सुगन्धी जल का छिड़काव हुआ। सारे शहर के स्त्री-पुरुषों और बालको को मैदान मे एकत्रित होकर दीवाली का उत्सव मनाने का आदेश दिया गया।

नवाब यह मानते थे कि दीवाली केवल हिन्दुओं का उत्सव ही नही रहना चाहिये। हिन्दु मुसलमान सब स्वयं का भेद भूल कर भाई भाई की तरह मिलें इसलिए राज्य स्तर पर यह उत्सव मनाया जाना चाहिये।

नवाब ने दरवारियों को अपना आशय समझाया और इस उत्सव पर खर्च होने वाला

करीव ५ लाख रुपया खजाने से खर्च करने का आदेश दिया। नवाव के हेतु को ध्यान मे रख कर हिन्दु अगेवानो ने भी इसका विरोध नही किया।

(५)

तारावाई को यह हुक्म पसद नही आया। दीवाली के दिन घर में दीपक न जले यह कैसे सम्भव है। जैन समाज इस रात्रि को भगवान महावीर के निर्वाण की पवित्र रात्री मानता है और दीपमाला प्रकटा कर महावीर के नाम का जाप करता है उस समाज को इस आदेश से कितना दु ख होगा इसकी कल्पना नवाव क्या कर सकता है ?"

तारावाई को देश की पराधीनता की जैसी व्यथा आज हुई पहले कभी नही हुई थी। हिन्दु वा जैन घर मे दीवाली को दीपक न जले इससे ज्यादा क्या पराधीनता होगी। नवाव चाहे जन्म से हिन्दु हो पर मुसलमानो के सहवास से वह हिन्दु का हृदय खो बठा है नही तो वह हिन्दू मुस्लीम एकता के नाम पर ऐसा जुल्मी हुक्म नही निकालता। राज्य के हिन्दु नायक भी मौन है वे भी गुलामी मे इतने फस गये है कि यह हुक्म सुनकर उनको भी कोई दु ख नही हुआ।

योगा योग उस वक्त ललिता वाई का गर्भ था और दीवाली के रोज ही उनको प्रसव की वेदना उत्पन्न हुई। तारावाई को यह जान कर एक सवल कारण मिल गया। उन्होंने हीरालाल को नवाव के पास जा कर यह अर्ज करने का कहा "आज रात्रि को दीपक जलाने की हमे मजूरी मिलनी चाहिये"। इसमे नवाव यदि आनाकानी करे तो हार मुझे वक्त की वात याद दिलाकर वचन पालने के अवसर की याद दिलाने की भी और सकेत किया।

हीरालाल नवाव के पास गया तो सही पर उसका हृदय धडक रहा था। कही नवाव *अपमान कर वापस भेज दें तो ? पर राजमहल से वह वापस आया तव उसके* चेहरे पर प्रसन्नता थी। तारावाई की भावना मुजव उसे मजुरी मिल चुकी थी।

तारावाई ने घर में दीपक जलाया ही था कि ललिता वाई ने एक पुत्र को जन्म दिया। तारावाई की प्रसन्नता का पारावार न रहा। प्रसूति कार्य से निपट कर वह हाथ मे एक गागर लेकर भागीरथी नदी की ओर स्नान करने को रवाना हुई।

जगत सेठ के घर के पास भागीरथी का निर्मल जल सदैव वहता था। वहा पहुँचने में तारावाई को देर न लगी।

इतने मे एक नौका किनारे आ लगी, सवार एक एक करके उतरे और अपने अपने मार्ग पर चल दिये। आखिर ही आखिर मे एक सुन्दर वस्त्रों मे सुसज्जित रमणी उतरी और किनारे पर चारों तरफ देखने लगी।

तारावाई दीर्घ दृष्टि वाली महिला थी। अन्धकार मे अकेली स्त्री को देख कर वह उसके पास गई।

"वहिन ! आप कौन हैं अकेले कहा जा रही हैं" मानो स्वय की सगी वहिन से ही तारा वाई ने यह प्रश्न किया हो।

"वहिन ! अपने दोनो एक दूसरे को वरावर पहिचानते हैं। सैकडो प्रवासियो मे किसी ने नही केवल तुमने मुझे पहिचान लिया इससे मालुम होता है कि अपना कोई पूर्व भव का सम्वन्ध है ' खिलखिला कर वह महिला वोली।

तारावाई ने पूछा "आप कहा जाती हैं इस प्रश्न का उत्तर मुझे नहीं मिला ?"

मस्करी करते हुए उस तरुणी ने जवाव दिया "अभी तो मैं नवाव के महल में जाती हूं।"

तारवाई ने विनय पूर्वक कहा" वहिन इतनी रात को एक मुसलमान के यहां जावोगी"

लक्ष्मी स्वरूप तरुणी ने स्वयं के आगमन का रहस्य इस तरह वताया "तुम्हें अभी कौम वाद की वू सताये हुए है। मेरे मन में तो ऐसा कोई भेद है नहीं। जो वुलावे उसके यहां जाऊ यह मेरा फर्ज है। मेरे तो हिन्दू मुसलमान दोनों ही पुत्र है। नवाव भी तो पहले हिन्दू था। आज भी वह दीपमाला का उत्सव एक हिन्दू को शोभे इस तरह से मना रहा है। मुझे उनके यहां जाने में क्या संकोच है।

तारा देवी ने मार्ग रोक लिया, उसको खात्री हो गई कि अवश्य ही यह लक्ष्मी देवी है वह तुरन्त ही लक्ष्मी देवी के चरणों से वैठकर प्रार्थना करने लगी" वहन एक वार मेरे घर में पगले नहीं करोगे ? वर्षों से मैं तुम्हारी राह देखती वैठी हूं। एक आध दिन के लिए भी मेरे आंगने में नही आओगे ?

स्थान, समय और सुयोग्यता का स्वर्ण सुगन्ध जैसा संयोग देखकर सूर्य भी अपनी लाल सिन्दुरिया रंगवती से इनका मानो अभिषेक कर रहा था।

लक्ष्मी देवी ने स्नेह पूर्वक तारावाई से कहा ! "वहन ! नवाव के महल में जाने से पूर्व थोड़ी देर के लिए मैं तुम्हारे घर जरूर चलूं पर तू देखती है कि आज पर्व के दिन सारे शहर में अन्धकार व्याप्त है–संध्या को ही मानों आधी रात्रि हो रही है ऐसा दिखता है, मेरा स्वागत करने को कोई तैयार नही है।'

सारा शहर मुसलमानी नवावी सत्ता के नीचे है. शहर में कही दिवाली का दीप नहीं है, केवल राज महल में ही दीपोत्सव करने की नवाव की आज्ञा है तो भी सामने एक छोटे घर में साधारण दीपक जल रहा है" तारा वाई ने यह कह कर लक्ष्मी देवी का ध्यान सामने के छपरे की ओर आकर्षित किया।

"जो हिन्दू समाज नवाव के ऐसे जुल्मी हुक्म का विरोध नही कर सकता वह समाज मेरा स्वागत किस तरीके से करेगा" लक्ष्मी देवी के शव्दो मे प्रकोप दिखाई दे रहा था।

"पर वहन ! मैने कोढीये में अच्छा सा दीपक प्रकटा रखा है। मन मे महावीर और गौतम स्वामी का गुणगान चल रहा है, वहां आपके पवित्र चरण कमल कैसे नही जावे ?"
तारा बाई ने निर्भिकता पूर्वक अपने स्वागत की तैयारियां वतलाई।

"अच्छा पहले भले ही तुम्हारे यहां आऊंगी पर मुझे ज्यादा मत रोकना, तू स्नानादि कार्य से निपट कर वहां जल्दी पहुंचना" गृह लक्ष्मी तारा देवी की विनती को लक्ष्मी देवी ने स्वीकारा। तारा वाई ने एक वार फिर लक्ष्मी देवी के दर्शन किये और फिर मार्ग में से एक तरफ हो गई। और वोली "वहिन पहले झोपड़े में पधारो वहां आपके सत्कार की सव तैयारिया है, मैं थोड़ी देर में वहां आती हूं।" लक्ष्मी देवी ने जगत सेठ के घर की तरफ प्रयाण किया।

पांच सात कदम वढ़ाये होंगे कि कुछ याद आने से तारा देवी लक्ष्मी देवी के पास उतावली उतावली आई और कहने लगी "वहन उतावल नही करना, मैं नही आऊं जव तक वही रहना, कहीं नहीं जाना"

लक्ष्मी देवी ने हंसकर मौन स्वीकृति दी।

इधर तारा देवी पानी में उतर कर स्नान करने लगी। पानी में रह कर वह सोचने लगी "मेरे पति के घर में लक्ष्मी देवी आसन जमा कर रहती होवे तो फिर मेरे उतावल करके घर

पहुंचने की क्या जरुरत ? मैं नहीं आऊं जब तक लक्ष्मीदेवी ने घर में रहने की स्वीकृति दी है। अब मैं वापस घर में न जाऊं तो कितना अच्छा ? क्यों न पानी में जल समाधि ले लेऊं ? लक्ष्मी को घर से वापस क्या भेजूं ? मेरे एक के भोग से बाकी सारा कुटुम्ब सुखी होवे, वंश परम्परात्मक लक्ष्मी का वैभव स्थिर रहता होवे तो ऐसी स्थिति से मेरे जीवन की क्या कीमत है ? गृह और कुटुम्ब के सुख सौभाग्य के लिए आत्म बलिदान देने का ऐसा प्रसंग भाग्य से ही किसी भाग्यशाली को मिलता है। ऐसा अवसर मुझे गवाना नहीं।

ताराबाई के मुख ऊपर निश्चलता का प्रभाव बढ़ा। वह गहरे पानी की तरफ बढ़ी। एक बार अपने निवास स्थान की ओर देखा और सोचा लक्ष्मी की कृपा से कुटुम्ब सुखी होगा। कीर्ति वैभव की प्राप्ति होगी, ऐसा विचार कर प्रसन्नता अनुभवते हुए, साहस कर नदी में आगे बढ़ी। अब तो भागीरथी के अगाध जल में केवल तारा देवी का सर ही दिखता था। पति, देवर व कुटुम्ब की चिन्ता में एक क्षण भर जीवन और मृत्यु के बीच में खड़ी रही। कुटुम्ब की सुख समृद्धि के सामने उसे अपना जीवन तुच्छ लगा। दूसरे ही क्षण तारा बाई का देह अदृश्य हो गया। बंगाल–माता के दूध जसे जल में तारा बाई का देह मिल गया

वचन से बंधी हुई लक्ष्मी सेठ हीरा लाल व मोती लाल के यहा तारा बाई की राह देख रही थी। चचल गिनी जाने वाली लक्ष्मी को ताराबाई जैसी गृह लक्ष्मी के बलिदान ने बन्दी बना कर अचल बनकर सेठ के कुटुम्ब में रहने को मजबूर होना पड़ा। थोड़े ही समय में सेठ का घर बार, असाधारण धन धान्य, सुवर्ण, जवाहरात से भर गया नवाब ने स्वयं इनको जगत सेठ की पदवी प्रदान कर स्वयं के पास बैठने का स्थान दिया। सारे देश में जगत सेठ की यशोगाथा गूंजने लगी।

प्लासी के युद्ध के बाद जगत सेठ का बन्दी बनी लक्ष्मी थक कर विदा हुई। ताराबाई की विस्मृति होती गई वैसे २ लक्ष्मी का वचन बन्ध भी ढीला होने लगा। ताराबाई ने भागीरथी के जल में निज देह मिला दिया वैसे ही जगत सेठ के महल भी एक दिन जल प्रवाहित हो गये। जगत सेठ की सता वैभव सब स्वप्नवत् बन गये।

पर ताराबाई की स्मृति उनके आत्म भोग के कारण युग २ के अन्धकार के बीच भी उस दिवाली के क्षीण दीपक की जैसे चमकेगी।

धन्य धन्य अणगार !

मगध की राजधानी श्रीराजगृही नगरी के ८४ चौराहों पर महाराजा श्री श्रेणिक-बिंबिसार की उद्घोषणा नगरजन सुन रहे थे।

नगरजन आश्चर्य व भय के मारे दंग रह गये !

चारों ओर सन्नाटा छा गया। सब सुमसाम चुपचाप !

उद्घोषणा थीः—कोइ नगर के बाहर न जायें। यक्ष का उपद्रव हो रहा है। जो जायगा वह जान गुमायगा।

नगर के बाहर यक्ष का उपद्रव ! छ पुरुष व १ स्त्री यो सात की दिन दहाडे हर रोज हत्यां हो रही थी। न कोइ रोक सकता था। न कोइ उस का उपाय दिखता था। बस, सात हत्या होते ही सारा दिन निरापद। शाम तक किसी को भी बाहर घूमने को न कोइ रोक न कोइ टोक। जब तक सात हत्याओ के समाचार न मिले तब तक किसी नागरिक का नगर से बाहर पैर रखने का साहस नही होता था। कहीं स्वयं यम खप्पर की भिक्षा न बन जाय। अरे भइ ! भूला भटका कहीं जीवन ज्योत बुझा न बठे। कभी कभार कोइ साहस कर भी लेता तो वह हमेशा के लिये दुनियां से उठ जाता। जिंदगी उससे रुठ जाती। यक्ष का भक्ष बन जाता। सारे नगर पर भय व आतंक छाया था। सारे लोग कांप रहे थे। चौराहे २ पर चर्चाएं चल रही थी। नगरजनो के झुंड के झुंड जगह २ पर इकठ्ठे होकर इसका पता लगाने की कोशिश कर रहे थे। आखिरकार यक्ष को इतना गुस्से होने का कारण क्या ?

एक उतावला नागरिक बोलाः—अरे ! यक्ष तो कहीं दिखाई नहीं पडता। पर मोगरपाणी यक्ष का मुद्गर उठाकर माली महोल्ले में रहने-वह भोला भला दिखनेवाला अर्जुनमाली उन्मत्त हुआ घूमता है और सहस्र पलभार उस लोह मुद्गर से हर रोज बेरहमी से सात का लहू चूसता है। इसको सुनकर असमंजस में पड़ा हुआ दूसरा नागरिक बोलाः—अर्जुन को तो मैं भलीभांति जानता हू। वह तो बडा सज्जन, भोला, भला व अच्छा आदमी है। इतना ही नहीं पर उसके घर मे पीढियों से मोगरपाणी यक्ष की पूजा उपासना होती है। यक्ष को तो वह परिवार अपना जीवन रक्षक मानता है। फिर यक्ष का लोह मुदगर उठा कर अर्जुन क्यो तूफान मचाता है ? यह समझ मे नही आता। वहां किसी कोने से आवाज आइ ! यह घटना भी ऐसी घटी है कि पानी आग बन जाय और झलझला बरफसा ठंड़ा भी उकल जाय, गरम हो जाय ! क्या कोइ सज्जन अपनी नजरों के सामने अपनी पत्नी पर के अत्याचार को बर्दाश्त कर सकेगा ? और वह भी एक साथ छे के अत्या-चारो को ? इस आवाज ने सभी को चौंका दिया। सभी शांत होकर मामला सुनने को उत्सुक बने। सभी ने उस कहने वाले को कहा—"भैय्या आगे आओ, और क्या बात है वह सुनाओ।" वे सज्जन आगे आये और उन्होंने बोलना शुरु किया—अर्जुन माली अपनी जीवन सहचरी बंधुमती के साथ हर

रोज अपने कुल की परपरा के अनुसार मुदगरपाणी यक्ष की नियमित पूजा करता था। हमेशा सुदर, सद्य विकसित, सुगधी सुमनो से पूजा कर यक्ष चरणों मे पति-पत्नि प्रणाम कर अपना सब कार्य करते थे। इतने मे एक अनहोनी घटना बनी और नगरी के छः भ्रष्ट, दुष्ट व व्यभिचारीओ ने ऐसा खाफनाक हथकडा किया कि जिसके कारण यह मौत का ताडव नृत्य राजगृही मे होने लगा, सारे लोगो पर आफत आ पडी। कुछ दिन पहले ६ बदमाश कि जिनके मडल का नाम था ललित मडल। यह ललित मडल कभी २ यक्ष उपवन मे घूमने हतु आता था। एक बार पूजा हेतु आये हुये माली युगल पर इन दुष्टो की कुदृष्टि पडी। बधुमति के रूप ने इन ६ मित्रा के दिल मे हलचल मचा दी। इस मडल ने मनोमन निर्णय किया—किसी भी प्रकार से बधुमति के रूपमधु का पान करना। किसी प्रकार हिरनी सी भोली मालनीया को फसाना और अपने दिल मे बसाना। दुष्टो ने कई करीदमे अजमाये पर सार नाकाम रहे। 'हारा जुआरी दुगना खेले' इस अनुसार ललित मडल ने भयकर आखिरी दाव अजमाना तय किया।

दूसरे दिन जब माली मालनिया यक्ष पूजन को आइ तब ६ दुष्ट मदिर के अतर द्वार के पीछे छिप गये। ज्योंही माली यक्ष चरणों मे नमा त्यों ही उन दुष्टों ने मजबूत रस्सी मे माली को कसकर बाध दिया। एव स्थान का पवित्रता को भूल कर ६ मित्रा ने बधुमति पर अत्याचार किया। कार कारनामा मे कोई कमी न रखी।

अपनी नजरो के सामने ही अपनी पत्नी पर गुजरे अत्याचार को देखकर अर्जुन का रोम रोम सुलग उठा। बधन मे होने के कारण असहाय दशा मे बेबस बन कर देखने के अलावा कोइ चारा भी तो नहीं था।

अर्जुन के मन मे अनल जल रहा था। उसकी आखो से चिनगारिया बरस रही थी। अगर अर्जुन की चलती तो आखो की चिनगारियो से उनदुष्टो को भस्म कर देता। पर क्या करे? कुदरत ने उसे वह शक्ति नही दी थी। अर्जुन को यह देखकर भी बडा गुस्सा आया कि—मने जिसकी जिंदगी भर एक मन से सेवा की वह भी उसके सामने होनेवाले अत्याचार को रोक न सका। अर्जुन गुस्से से झल्ला कर यक्ष पर बरस पडा—

अरे यक्ष राज आप निरे लकडे के टूकडे हो। हमने तो हमारे पिताजीआदि से सुना था कि आप प्रत्यक्ष प्रभावी हो, और हम भी इसी श्रद्धा स आपकी सेवा करते थे। हम मानते थे कि—आपकी भक्ति हमारा रक्षा कवच है। पर सारा बेकार! गलत! झूठ। कितनी गजब की बात—आपके सामने ही आपके सेवक की पत्नी पर अत्याचार हो रहे हैं। अरे! उसकी लाज ६ दुष्ट लूटते हैं! आपके भक्त-भक्तानी की दुर्दशा हो रही है। अजी आपसे तो वह कृष्णजी अच्छे, कि जिन्होंने याद करने वाली द्रौपदी का जब दुर्योधन की कौरव सभा मे वस्त्र हरण हो रहा था वहा उसकी लाज बचायी थी। दूर रहकर भी भक्तो की पीर हरी थी। पर धत्! आपके सामने इतना काण्ड मचा पर आप कुछ नही कर सके। आपका प्रभाव अब मर गया है। अरेरे मने आज दिन तक आपकी सेवामे बेकार समय गवाया। काम धधे को छोड कर सब खोया। बस! इसमे कुछ नही धरा। निरा षड्यत्र है।

यक्ष अपने भक्त की आनवाणी सुनकर गुस्से मे आया और अर्जुन के शरीर मे प्रवेश किया, और रस्सी के बधन तोड दिये। गुस्से से तिलमिला कर यक्ष ने ललित मडल के ६ मित्र और बधुमति को अपने लोह मुद्गर से वही का वही खत्म कर दिया। गुस्से मे आये उस यक्ष ने उस दिन से एक सिलसिला बनाया है—वह ६ पुरुष व १ स्त्री को नित्य खत्म करता है। सात का घात करके वह उस दिन कुछ नही करता। इतना कहकर उस सज्जन ने सास ली।

मृत्यु के भय मे घिरे राजगृही वासी यह तय नही कर पाये कि क्या किया जाय? कसे इस आफत को टाली जाय? सारी बातें व उपाय,

बातचीत, चर्चा विचारणा व सलाह मशविरा तक सीमित रहते थे। उसे क्रियान्वय रूप कोई नहीं दे सके। वह चूहे बिल्ली वाला किस्सा चरितार्थ हुआ बिल्ली से डरे चूहों की सभा मिली। सभा में चूहों ने तय किया कि बिल्ली चुपके से बिना आवाज आती है, और अपने समाज को खा जाती है। अतः बिल्ली के गले मे घंटी बांधी जाय ताकि उसके आगमन का पता चल जाय और अपन इधर-उधर होकर बच जायं। प्रस्ताव सर्वानुमति से पास हो गया। पर बात यहां आकर रुकी—कि घंटी बाधने जाय कौन? सब एक एक का मुंह ताकने लगे, पर किसी चूहे ने बिल्ली के गले में घंटी बांधने का साहस नही दिखाया। सब यहा वहां चले गये। राजगृही की यह ही बात थी। दिन बीतते जा रहे थे। लोग चौकन्ने थे—जब तक सात हत्याएं होने के समाचार न मिले तब तक कोइ बाहर नही जाते। अब तो लोगों की आवन जावन नही जैसा हो गया। अब तो सात की संख्या भी यक्ष को मुश्किल होने लगी। कभी २ तो दिन खाली भी चला जाता। राजगृही के द्वार बंद हो गये थे।

सभी आकुल हो गये थे। पर करे क्या? किसी के बस की बात नही थी। इतने में अजीब चमत्कार हुआ। सभी की नजरे भी उस चमत्कार पर टिकी। लोग समझने लगे अब आफत का अंत नजीक आया है।

त्रस्त, व्यस्त, व संतप्त संसार की सारी आफतों के बादल बिखेरने के लिए नव अनिल से विश्वोद्धारक श्रमण भगवान महावीर स्वामी परमात्मा १४ हजार साधु, ३६ हजार साध्वीएं, व कोटान्कोटि देवताओं से संयुक्त धरती तल को पावन करते हुए राजगृही नगर के बाह्य उपवन से गुणशील चैत्य में समवसरे थे। देवताओं ने समवसरण की रचना की। (तीर्थंकर देव जिस धर्म सभा में देशना देते हैं उस धर्म सभा हेतु रची गई रचना को समवसरण कहते है) बारह पर्षदाएं प्रभुवाणी सुनने हेतू इकठ्टी हुई। राजगृही निवासीओं को भी प्रभु वंदन व प्रभु वाणी श्रवण की तीव्र उत्कंठा जगी। किन्तु अर्जुन माली का मौत अभियान सभी के सामने जोरों पर था। पर भला कोई सभी कायर थोडे होते हैं? कोई न कोई तो प्रभु भक्त व मर्दानगी के वरदान जैसे निकलते ही हैं।

राजगृही नगरी के श्रावक श्रेष्ठ सुदर्शन ने अपने आराध्य देव तीर्थंकर भगवान श्री महावीर स्वामी का आगमन सुना, और उसकी आत्मा मत्त मयूर ज्यो नाच उठी। सुदर्शन ने मन में निश्चय किया—परम तारक परमेश्वर के दर्शन वंदन करना, एवं इनकी वाणी अवश्य सुननी। इसके लिये कोई भी आफत सहन करनी पडे, या जीवन का मूल्य चुकाना पडे तो भी कोई हर्ज नहीं। अपने मनोमंदिर के नाविक महावीर देव को वंदना करने की पूर्ण तैय्यारी भी करली। सारी तैय्यारी कर सुदर्शन ने माता पिता से प्रभु चरणों में जाने हेतू आज्ञा मांगी। अपने नयन सितारे की बात सुनकर माता पिता सिहर उठे। माता पिता का मन किसी भी प्रकार से तैय्यार न था। उनके मन में तो ओह! अर्जुनमाली! अरे! यक्ष! मौत का नंगा नाच! अब तक कोई समाचार नही कि सात घात का कार्य पूरा हो गया है।

कैसे भेजा जाय? जान बूझ कर मौत के मुंह में फेंका जाय! नही। कतई नही। यह कभी नहीं बन सकता। ऐसी आज्ञा हरगिज नही देंगे।

माता पिता ने अपने लाल दुलारे से कह दिया—वत्स! यहा से ही जीवनप्राण जिनेश्वर को भाव वंदना कर लो। अब तक सात घात के समाचार नही मिले। इस स्थिति मे तुम्हारा नगर बाहर जाना खतरे से खाली नहीं है और न ही हम ऐसी आज्ञा दे सकते हैं या तुम्हे भेज सकते है।

पर मानस सरोवर को पाकर मोती चरने वाला राजहंस मानसरोवर को छोड कर कैसे जायगा? वह तो हर कोशिश वर मानसरोवर पर रहेगा व मोती चरेगा।

यदि पंखी भी अपने इच्छित को छोड नही सकता तो—जिसके हृदय की वीणा का तार तार मात्र वीर वीर का झकार कर रहा है ऐसा सुदर्शन अपने अंतर को आलोकित करने वाले केवल ज्ञान

दिवाकर को कैसे छोड सकेगा ? और कैसे ही उनसे दूर रह पायेगा ?

माता पिता व सुदर्शन के बीच काफी बात चीत हुई। आखिर मातापिता को पुत्र की दृढ श्रद्धा के सामने हार माननी पडी। सुदर्शन की दृढ धर्म श्रद्धा की विजय हुई। माता पिता को प्रभुचरणो मे जाने की आज्ञा देनी पडी। सुदर्शन ने स्नान किया। शुभ्र, शुद्ध व बहुमूल्य वस्त्रालंकार धारण किये। मन म श्रद्धा व तन मे उत्साह भर सुदर्शन श्री वर्धमान विभु के समवसरण की ओर अग्रसर बना। नगरद्वार पर सुदर्शन आया तो नगरद्वार बंद था। द्वारपाल ने सुदर्शन को राज उद्घोषणा याद करवाई। पर सुदर्शन की अडिग श्रद्धा, व दृढता को देखकर द्वारपाल ने श्री सुदर्शन को नगरद्वार बाहर जाने दिया। श्रद्धा भरे कदम बढाता हुआ सुदर्शन नगर बाहर के गुणशील चैत्य की ओर जा रहा था। वनखान शासनपति सुरासुरवंदित श्री वर्धमान जिनेश्वर समवसरे थे। जहा मुक्ति की शहनाइया बज रही थी।

भक्ष्य के लक्ष्य वाला यक्ष मानव गंध की प्रतीक्षा में था। बहुत दिनो से भक्ष्य की कमी ने यक्ष को क्रोध मे चकचूर कर दिया था। मानव गंध आते ही यक्षराज गुस्से के मारे हाथ मे मुद्गर उछालते उछालते गंध की दिशा मे दौड। सुदर्शन ने देखा यक्षराज मेरे पास आ रहे हैं।

त्रास, उद्वेग, क्षोभ व दीनता को मन से निकालकर निर्भय बन कर सुदर्शन खडा रहा। अपने पैरो तले की भूमिका प्रमार्जन कर दोनो हाथ जोडकर मस्तक पर तीन बार आवृत कर भगवान का समवसरण जिस दिशा मे था उस ओर अंजली जोडकर सुदर्शन बोला—मोक्ष में गये हुए अरिहंतो को व मोक्ष की इच्छावाले श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी परमात्मा को मेरा नमस्कार हो ! मैने पहले भगवान महावीर देव के पास (१) स्थूल प्राणातिपात, (२) स्थूल मृषावाद (३) स्थूल अदत्तादान (४) स्वदारा संतोष (५) स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत (अर्थात हिंसा, असत्य, व चोरी का त्याग, स्वपत्नी मे संतोष व इच्छित परिग्रहण का त्याग) धारण किया था।

उसी परमात्मा की साक्षी से मै उक्त पचव्रतो का आजीवन पालन, क्रोधादि कषाय व मिथ्या दर्शन का त्याग, खानपान का त्याग (अशन, पान, खादिम, व स्वादिम आदि चारों आहार) आदि का पच्चक्खाण जीवन भर के लिए इस छूट के साथ लेता हूँ कि यदा कदाचित् मैं इस उपसर्ग से मुक्त हो जाऊ तो इस पच्चक्खाण को पारुगा। यदि उपसर्ग मुक्त नहीं बना तो यह पच्चक्खाण जीवन भर के लिए निश्चित है।

सुदर्शन इस प्रकार सागारिक अनशन का अभिग्रह धारण कर काउस्सग्ग मे स्थिर हो गया। यक्ष मुद्गर उछालते २ सुदर्शन के पास आया। पर ! ओह ! यह क्या हुआ ? यक्ष चक्का चौंध होकर दूर ही क्यो अटक गया। जसे सूर्य के सामने अपनी आखें टिक नहीं सकती ठीक वैसे ही दृढ श्रद्धेय श्रावक सुदर्शन के तेज को यक्ष बर्दाश्त न कर सका। यक्ष से सुदर्शन का तेज सहन नहीं हुआ। यक्ष सुदर्शन को परेशान व खतम करने आया था, मगर श्रावक धर्म तेज के सामने स्वय परेशान हुआ व अपना सामर्थ्य खतम कर बैठा। यक्ष उलझन मे पडा व सोचने लगा। यह कैसी अजीब शक्ति है। अनेक भक्ष्य आये व मर गये पर यह तो कोई कमाल तेज है। यक्ष स्वय घबडा गया। दायी बायी फेरीयां काटने में कोई कमी नही रक्खी। पर सुदर्शन का बाल भी बाका कर न सका। चक्कर काटकर यक्ष सुदर्शन के सामने टिकटिकी लगाकर देखने लगा। बहुत समय तक देखने २ बेबस सा खडा रहा। आखिर धर्म प्रभाव के सौम्य पर ओजस्वी तेज से डरकर अर्जुन माली के शरीर को छोडकर अपने आपको बचाने हेतु जी मुठ्ठी मे लेकर यक्ष भाग गया। व साथ २ अपना लोह मुद्गर भी उठा ले गया।

शरीर बिना सबला हुआ होने के कारण यक्ष का पलायन होते ही अर्जुन माली धडाक से धरती पर ढल पडा। अचेत सा बना।

उपसर्ग दूर होते ही सुदर्शन ने काउस्सग्ग व पच्चक्खाण पारा। एकाध घंटे में मूर्च्छा दूर होते ही माली स्वस्थ होकर खडा हुआ। अर्जुन सुदर्शन को अपने पास में देखकर पूछने लगा—महानुभाव आप कौन हो ? कहाँ पधार रहे हो ?

सुदर्शन ने कहा—हे देवानुप्रिय मै जिन कथित नव तत्व को जाननेवाला व माननेवाला जिनोपासक वीर सेवक सुदर्शन हूं। श्री गुणशील चैत्य में चौविस में तीर्थपति भगवान श्री महावीर स्वामी समवसरे है, मै वहां प्रभु वन्दना व प्रभुवाणी श्रवण के लिए जा रहा हूं।

अर्जुन ने कहा—देवानुप्रिय महाशय चलिये मै भी त्रिशलानंदन ज्ञा पुत्र भगवान श्री महावीर देव के पास आपके साथ २ चलु।

दोनों ही समवसरण मे प्रभुचरण में गये। बारह पर्षदा में अपने उचित स्थान पर बैठे व विधिवत् विभुवन्दना की।

सिद्धारथ सुत, काश्यपगोत्री वीर भगवान ने बारह पर्षदा के सामने भवजल तारक उपदेश सुनाया। सुदर्शन उपदेश सुनकर घर गया विश्व वत्सल, विश्ववन्द्य, वीर विभु की वाणी अर्जुन को आत्मा को भा गइ। आत्मा को जगा गइ।

अर्जुन ने प्रभुदेव को विनति की-हे तरणतारण देव ! मै निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हू। मुझे निर्ग्रन्थ प्रवचन सुहाया है, मेरे मन को भाया है, मैने उसे दिल देवल मे ठसाया, बसाया है,। भावना है कि आपके चरण शरणो मे आउं। सर्व त्याग के पथ पर जाऊं जीवन ज्योति जगाउं। एवं अनादि से आत्म राज्य के आक्रान्ता अष्ट कर्मो को भगाउं ! सिद्ध स्थल मे आपका साथी बन पाउं। भगवान ने फरमाया-अहासुहं देवाणुप्पिया ! यथासुखं देवानुप्रिय !

अर्जुन माली इशान कोण में गया। अपने हाथों से पंचमुष्ठि लोच किया। जीवन तारक प्रभु को अर्जुन ने कहा-हे भगवन्। विषय कषाय से जलते हुये संसार दावानल में जल रहा हूं। कृपालु भवाटमी में भोग का खप्पर लेकर भटकते इस भिखारी को प्रवज्या प्रदान करिये व भव से उद्धरिये। निष्कारण करुणाकर जगद्वन्द्य जिनपति ने अर्जुन माली को दीक्षा प्रदान की। संयमी बनाया। अर्जुनमाली अणगार बने। शासन के शणगार बने। पावन बने। अणगार अर्जुन माली चरित्र में चौकन्ने, ब्रह्मचर्य पालने में कठोर व उग्र तपस्वी बने। स्वाध्याय में तल्लीन बनें।

दीक्षा दिन से अर्जुन माली अगणार ने जीवन भर तक बेले के पारने बेला (दो उपवास) करने का दृढ़ नियम किया।

अर्जुनमाली अणगार-प्रथम पौरसी में स्वाध्याय, दूसरी पौरसी में अर्थ चिंतन कर प्रभु आज्ञा पाकर तिसरी पौरसी में निर्दोष भिक्षा लेने हेतु जयणा (उपयोग) पूर्वक जाते। राजगृही के छोटे, मोटे व मध्यम घरों में फिरते। इस अणगार को देख कर काई कहता यह वह दुष्ट आत्मा है कि जिसने मेरे पिताजी को मौत के घाट उतारा था। कोई और कहता-यह वह ही कर्म चंडाल है कि जिसके मेरी जीवन संगीनी का खून चूसा। वहां तीसरा बोलता अरे ! यह तो महानीच है कि जिसने राम लक्ष्मण से हमारे लघु युगल को खंडित किया। कोई गुस्से के मारे अणगार पर गालियों की वर्षा करते तो कोई लठ्ठी लेकर मुनिवर को मारते थ। कोई पत्थर फैंकते। पर ये अणगार ऐसे अपूर्व सहनशील थे किन्तु किसी पर रोप, न किसी पर द्वेप, न मन में किसी के प्रति अभाव, न दीनता, न खिन्नता, न शोक, न दुख और न ही क्षोभ को अपने चित्त मे प्रवेश करने देते। सदैव प्रशांत, प्रसन्न व समभाव में मस्त रहते। इस अणगार को जीने पर न प्यार था न मृत्यु पर द्वेप था। अनासक्त भाव से गंगा निर्मल नीर जैसा पवित्र जीवन जीते थे। आहार मिले तो भी हर्ष नही। और न मिले तो दुःख नही। कभी उत्तेजना, न अधीरता। न कायरपना। मात्र समाधि की मस्ती में मस्त। अणगार की आत्मा मे आनन्द लहरे हमेशा लहेराती थी। कोई स्थिति उन्हे विचलित नहीं करती न कोई चिंता, न कोइ फिकर। दुःख ने तो मुनिवर से किनारा ही कर लिया था।

प्रभु आज्ञा को पाकर, मूर्छा छोड कर, मात्र देह को किराया देने के लिये रखा, सुखा, लुखा जो भी आहार मिले उसे निराग भाव से लेते थे। जैसे साप बिल मे प्रवेश करते समय नीचे ऊपर की पृथ्वी को छूने के सिवा ही ज्यो बिल मे घुसता है, वैसे मुनिवर स्वाद को बिना लिये ही आहार शरीर को देते थे। शरीर को किराया देते थे।

इस प्रकार की अनुकरणीय, अनुमोदनीय, प्रशसनीय व धन्यवादाए घोर तपश्चर्या व निमल चारित्र का ६ मास तक परिपालन किया। जीवन की सध्या के समय पन्द्रह दिन का अनशन (पन्द्रह दिन के उपवास सह काया की माया का त्याग) कर शरीर को सुलाया, शरीर की ममता के बधन तोड व आत्म को परिपुष्ट व शुद्ध बनाया।

जिस ध्येय की सिद्धि के लिये, जिस लक्ष्य बिंदु तक पहुचने के लिए, एव जिस शाश्वत शिखरो को सर करने के लिये सयम लिया था, उस सिद्धि पद को पाये। अजर, अमर, अचल, अक्षय पद के लक्ष्य बिन्दु पर पहुचे। शाश्वत आनन्द के शिखर सर किये। सादि अनत सुख मे मस्त बने। न रहा जन्म, जरा या मरण! न रही आधि, व्याधि व उपाधि! कोटी कोटी प्रणाम हो तेरे चरणों मे। धन्य तेरी साधना! जय हो महात्मा अर्जुन माली अणगार की! धन्य धन्य अणगार!!!

वीर स० २४९७, वि० स० २०२८ श्रावण शुक्ला ५ श्री नेमि जिन जन्म कल्याणक दिन।

श्री नेमिलावण्य चरणो पासक

मुनि श्री मनोहर विजय

जैन श्वे व उपाश्रय, लाखन कोटडी
अजमेर (राज०)

भ्रमणा :–

लेo मुनिप्रवर विशालविजयजी मo साo चोपाटी (बम्बई) (विराट)

भ्रम एक बारीक पडदा है, जो रंगीन और बहतरीन होते हुए भी कुछ नहीं होता।

भ्रम को सच्चा समझने पर अपने को बहुत बड़ा फरेब घेर लेता है और उसे पहचानना ताकत के बाहर की बात बन जाती है। भ्रम आखिरकार टूटता जरूर है, किन्तु जितना जल्दी टूटे उतना ही अपने हक में अच्छा है। कभी तो बड़ी देर बादके और कभी कभी तो अपने टूटने पर भी भ्रम नहीं टूटता नही मीटता।

भ्रम को पैदा करने वाला मन है। तरह तरह के फायदे और जायके बता जता कर मन जीव को भ्रमणा में डाल देता है। यहां तक कि जिस राह से आज तक कोई भी सफल न हुआ उसी राह से सफल होने का जीव को विश्वास हो जाता है।

ईला पुत्र बहुत समझदार होते हुए भी आज भ्रमणा के दलदल मे फस गया था–धस गया था।

'अरे ईला पुत्र ! कहां चले ? भई, बड़े खोये-खोये नजर आ रहे हो।'

'हां यार बड़ा भारी सौदा किया है आज।

'सो क्या ?

'अरे एक अप्सरा के लिए सब कुछ छोड़ आया हूँ मैं।''

'अजी साफ साफ बताओ ! कौन अप्सरा और क्या छोड़ आये ?

''ओह, वह एक नर्तकी है। उसके तन-वदन मे अजीव लचक है, अंग प्रत्यंग मे विजली सी तड़प है। रूप का सागर वह अपने मे समेटे है। वह नवयुवती क्या है, संसार की सारी सुन्दरता की स्वामिनी है। उसका मुग्ध कौमार्य आंखों को विवश करता है, मन को जकड़ लेता है। दोस्त ? क्या बताऊं उसकी बात ? जिस दिन मैं उसे पा लूंगा वह दिन मेरे लिए अपार आनद का होगा। मैं परम सुखी हो जाऊंगा।''

और.........पता है तुम्हे ?

''किस बात का ?''

'यही कि मैं इस नर्तकी के लिए सब कुछ छोड़ आया हूं।'

बड़े बहके बहके नजर आते हो, कुछ साफ-साफ बताओ तो पता चले।

'सारा पता चल जाएगा थोड़े ही दिनों मे। एक तरफ माँ–बाप, इज्जत पैसा, समाज आदि सब कुछ था और दूसरी तरफ यह रूप सुन्दरी। मैंने सब कुछ ठुकरा कर दिल का सौदा किया। समझे ?

उत्तर सुनने के पहले ईलापुत्र चल दिया और सारी बात सुन्दरी के बाप नर्तक को बतादी, नर्तक ने कहां, जवान तुम बड़े जिदांदिल और बहादुर हो। चतुर और समझदार हो। कोइ शक नही कि तुम जैसा जमाई मिलना सरल या सीधी बात नही है। लेकिन पता है न, कि हम नर्तक को ही अपनी बेटी दे सकते है ?'

हां, हां, मैं खूब जानता हूँ और नर्तक बनने को तैयार भी हूं।'

'हम तुम्हारे उत्साह को समझ सकते है किंतु नर्तक बनना आसान काम नही है।'

'अजी, आसान और मुश्किल जैसी कोइ चीज

हैं ही नही। जिसे जो करना आता हो उसके लिए वह आसान, और न आता हो सो मुश्किल।'

'वात तो वडे पते की कही तुमने। पर तुम्हें हमारे सारे करिश्मे और करतब सीखने होंगे जो खतरे से भरे पडे हैं। अगर तुम इसमे सफल न हुए या कही हाथ-पैर तोड बैठे तो हमारी बिटिया तुमसे शादी नही करेगी, यह पक्की बात है।'

'अजी, आपतो सारी बातें छोडिये और यह बताइए कि मुझे क्या-क्या करना है ?

'अच्छा चलो बताते हैं।

और ?

और थोडे ही महीनो मे इला पुत्र अच्छा नतक बन गया।

लगन और समझदारी से काम करने वाले के लिए ससार मे कुछ कठिन या असभव नही है।

जन्मजात नतक भी जो करतब नहीं कर पाते थे, उन्हें इलापुत्र वडी मौज से करने लगा। नर्तक कुल मे वह कलाबाज और सयाना सिद्ध हुआ।

इलापुत्र ने एक बार मौका देख कर नतकी के पिता को कहा, अब मैं काबिल हो चुका हू। कब करेंगे मेरी शादी ?

"कैसी कलामर्मज्ञ राजा को अपने करीश्मे बताकर खुश करो, तब, सिद्ध होगी तुम्हारी कुशलता। वर्ना घर मे तो नर क्या नारी भी बडी चतुर मानी जाती है।"

'आप कहें वहा मैं अपना कौशल बताऊ।"

और एक बडे शहर के राजवाडा चौक मे नतकका कार्यक्रम निश्चित हुआ। ऊचे ऊचे बास गाडे गये, रस्से बाधे गए। सारे शहर मे नतका की ही चर्चा चल पडी। मैदान मे मैला लग गया, समय पर अपनी अनूठी वेषभूषा से सज्ज नतक मण्डल आया। दर्शकों ने तालिया बजाकर स्वागत किया।

राजा व राज परिवार भी सोने के सिंहासन पर आ बैठे। तमाशा शुरू हुआ। अप्सरा जैसी मनोहर नर्तकी ढोल बजाने लगी। उसके ताल मे नतक इलापुत्र दो बास के बीच बधे रस्से पर चढ कर अपने कर्तव्य और करिश्मे बताने लगा। बिना आधार के वह, रस्से पर थिरकने लगा। पैर मे लकडी के खडाऊ पहन कर वह ऐसे हैरत भरे खेल करने लगा कि देखने वालों की सास थम जाती। मानो वह नतक गिरा, वो पडा, खलास, इसके सौ साल पूरे हो गये।

मगर नतक तो वडा माहिर और काबिल निकला। वह अपनी अनोखी अदा से लोगो के दिल जीत चुका था। वाह, वाह की पुकार और तालियो की आवाज से मैदान भर जाता था।

सुगठित अग और गौरववर्ण वाली नवयुवती नर्तकी पैर मे घु घरू बाध थिरकती और तालवद्ध ढोल बजाती थी। तमाशा खत्म होते ही नतक बडे उमग से नीचे उतर आया। एक विजयी की अदा से चारो तरफ देखा, सब खुश थे पर यह क्या ? राजा ही खुश न थे।

राजा को सुप्रसन्न करना आवश्यक था। बीजली की तरह तेजी से नर्तक बास पर फिर चढ गया बास की नोक पर चढकर दिल को दहलाने वाले खेल वापस शुरू किये। रस्से पर खतरे से भरपूर करतब बताए। देखने वालो की धडकने बढ गयी-सास थम गयी—नजरें बध गई। वाह के पुकारो से आकाश भर गया।

परन्तु न रीझा राजा।

तीन तीन बार खेल करने पर भी राजा पर कोई असर दीखाई नही देता था। वह हीम्मत हार ही रहा था कि नतकी को नजर पडते ही वापस उत्साहित होऊठा राजा अवश्य राजी होगा इस विश्वास के साथ वह चौथी बार जीन्दगी और मौत के बीच झूलने उस रस्से पर जा चढा। फिर लोगो ने पारावार आनन्द प्रकट किया। नतक को विचार आया कि लोग इतने खुश हो रहे हैं तो राजा क्यो नही होता ? राजा के खुश होने पर ही प्रजा की खुशी का कुछ अर्थ है। अन्यथा सब कुछ व्यर्थ है। कितना समझदार राजा है, क्यो नही खुश होता ? अरे, अरे, वह तो मेरी और देखता तक नही है। जिसे इतने जोखिमभरे खेल बताने इतनी दूर से आया हूँ, उसकी तो नजरे कही और है। अरे यह तो मेरी होनेवाली पत्नी

को रूपरंभा अप्सरा जैसी नर्तकी को कैसी टिकटिकी लगाए निरख रहा है। छम छमाते पैर ढोल पर पड़ते मांसल हाथ और...........और कांपती हुई छाती...........अरे....अरे.... यह राजा मुझ पर खुश होगा ? और धन देगा ? हां समझा, बार बार तमाशा बताने के लिए विवश कर राज मुझे यहा से गीराकर मारना चाहता है।

मैं राजा का धन चाहता हूं और राजा मेरी मृत्यु अब क्या करू ? क्या यह राजा प्रसन्न होगा।

परिस्थिति को ताडने वाला इलापुत्र निराश हो दिशाओं में देखने लगा । एक घर में नजर गई और ठहर गयी।

एक अतिरूपवती रमणी हाथ में लड्डू का थाल लिए खड़ी है सामने युवा और स्वरूपवान एक मुनि खड़े थे। भावविभोर रमणी मुनिराज को लड्डू लेने का आग्रह कर रही थी और मुनिराज मना कर रहे थें।

इस दृष्यका इला पुत्र पर जादु का सा असर हुआ। वह सोचने लगा इनका कैसा रूप-कैसी जवानी, कैसा भाव और एकात !!! इतना होते हुए भी ये कितने तृप्त और सतुष्ट है। और मैं ? मैं भूखे भेडिये की तरह रात दिन विषयों में जलता उबलता रहता हूं। मां-बाप, सगे स्नेही किसीका न मानकर मैं नर्तक बना और नाचना कूदना सीखा। यहा राजा को खुश करने आया और राजा मुझे मारना चाहता है । जिसे मै चाहता हूँ उसे राजा भी चाहता है। धिक्कार है मुझे और मेरी कमअक्ली को। धन्य है ये मुनिराज, धन्य है ये धर्मिष्ठ सन्नारी...........इस तरह आत्मध्यान में स्थिर होते ही नर्तक के दुष्टकर्मो का बड़ी तेजी से नाश होने लगा। थोड़ी देर मे उन्हे केवलज्ञान हो गया ' देवताओने दुंदुभी गडगड़ाइ जयजयकार करते वे आ पहुंचे । इला पुत्र केवली को मुनिवेश अर्पण किया और सुवर्ण के कमल पर उन्हे बैठाया उन्होने धर्मदेशना देते हुए फरमाया कि सारा फरेब बेसुझी का है। इसका नाम भ्रम है। भ्रम मीट्टी में सोंना और कांच में हीरा दिखाता है। गैर मे अपने और अपने गैर बताता है । भ्रमण में से बाहिर निकलो और अपने आपको जानों। आनन्द का खालीपन को भरने के लिए आदमी बाहिर की चीजे इकट्ठी करता है । इससे मन चाहे जितना खुश हो, पर अपनी आत्मा का दुःख तो जरासा भी कम नही होगा प्रत्युत बढ़ेगा। अतः सद्ज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करीये।

कर्म विपाक और केवल ज्ञान

(ले० साध्वीजी निर्मला श्री जी एम ए मा रत्न, भापारत्न)

प्रात काल का समय था। सूर्य देव अपनी किरणों मे विश्व को प्रकाशित कर रहे थे। उस समय चम्पापुरी के राजा अमर सेन अपनी धर्म क्रियाओं से निवृत होकर विश्राम मण्डल मे विराज रहे थे।

उसी वक्त यकायक नगर म जय जय कार की ध्वनि सुनने मे आई। आकाश मे देव और विद्याधरो के विमान दिखाई देन लगे। पुष्प वृष्टि होने लगी। इसे देख सुनकर राजा ने पूछा "अरे यह क्या हो रहा है ? जल्दी पता लगाकर बतलाओ। प्रतिहारी ने तलाश कर राजा से निवेदन किया "हे स्वामी ! सोमा नाम की एक प्रवर्तिनी साध्वीजी को आज भूत, भविष्य और वर्तमान के पदार्थों का ज्ञान धारण करने वाला केवल ज्ञान प्रकट हुआ है, इसी कारण सारे शहर में नगर निवासी, देव और विद्याधर आनन्द में आकर मधुर वाणी से उनकी स्तुति कर रहे हैं। यह सुन कर राजा हर्षित होता हुआ भगवती साध्वी जी का वदन करने के लिए रवाना हुआ।

निर्मल स्फटिक रत्न के समान कान्ति युक्त, उत्तम शिल्पियो द्वारा देव विमान सदृश निर्मित, सुन्दर उपाश्रय मे राजा आ पहुचा वहा भव समुद्र से पार हुए, लक्ष्मी के जैसे शोभा सम्पन्न, गुण रूपी रत्नो से विभूषित, उज्जवल, सौम्य मूर्ति मुख्य गण स्वामिनि साध्वीजी महाराज को देखा।

राजा न भगवती साध्वी जी को सोने चादी के पुष्पो से वधाया, धूप किया और दोना हाथ जोडकर व मस्तक नमा कर साध्वी जी के चरण कमल मे वदन किया और सामने ही जमीन पर बैठ गया। इसके बाद केवल ज्ञानी भगवती सोमा से राजा अमरसेन व अन्य जन समूह को दानादि चार प्रकार से धर्म का उपदेश देना प्रारम्भ किया।

उसी वक्त बन्धुदेव और सागर नाम के दो सार्थवाह पुत्र स्वय की पत्नियों के साथ वहा आ पहुचे। भगवती साध्वी जी को वदन कर सागर ने राजा की ओर देख कर कहा "हे महाराज! साध्वी जी महाराज के उपदेश में विघ्न पड गया इसका दिल में खेद मत करना, अति अद्भुत और असभवित वस्तु मेरे देखने में आई है और उसका तत्व जाने बिना मेरे मन में शाति होना सभव नही है अत आप इजाजत देवें तो उस वस्तु के सम्बन्ध मे भगवती से पूछू।" राजा ने पूछा 'भद्र ! ऐसा क्या आश्चर्य बन गया है ?' सागर ने कहा देव ! आप सुनो

"आज से बहुत वर्षो पूर्व मेरी पत्नी का बहु मूल्य हार खो गया था। आज मैं भोजन करने के बाद जब चित्र शाला मे गया तो वहा चित्रित मयूर को जोर २ मे श्वास लेते देखा। अपनी गर्दन को नीची झुका कर तथा पखो को फड फड़ा कर व उन्हें फैलाकर वह नीचे उतरा और लाल वस्त्र वाली छाबडी मे हार रख कर वह वापस अपनी जगह चला गया और चित्र रूप

बन गया। मैं तो यह सब देखकर अचम्भे में ही रह गया। इतने में जय ध्वनि की आवाज मेरे कान मे पड़ी। देव और विद्याधरों के विमान आकाश मे दृष्टिगोचर हुये, पुष्प वृष्टि हुई और लोगों से मैंने सुना कि भगवती साध्वीजी को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ है इससे भक्ति और कौतूक से भरे हुए हृदय से मैं यहां आया हूँ।"

यह वृतांत सुन कर राजा विस्मित हो गया और साध्वी जी से पूछा "हे भगवती! यह असंभावित आश्चर्य क्यो हुआ?" राजा का प्रश्न सुन कर भगवती सोमा बोली "हे राजन्! कर्म सत्ता के आगे कोई चीज असम्भव व आश्चर्य की नही है। जो अशुभ कर्म का उदय होवे जो जल आग हो जावे, चन्द्रमा अन्धकार वाला बन जावे, न्याय अन्याय हो जावे, अर्थ अनर्थ हो जावे, और मित्र शत्रु हो जावे। और जो शुभ कार्य का उदय होवे तो उससे विपरीत संयोग बन जावे। जहर अमृत हो जावे, दुर्जन सज्जन हो जावे और अपयश भी यश बन जावे।

राजा ने भगवती आर्या से पूछा 'यह किसके कर्मो की परिणति है?" साध्वी जी बोले; भद्रे! यह मेरे ही कर्मो का परिणाम है" राजा ने पूछा "यह कैसे, और कौनसे कर्म का यह निमित्त बना है" साध्वी जी बोले "इसके जानने के लिए मेरा वृतांत सुनना जरूरी है"

इस भरत क्षेत्र में "शख वर्धन" नाम का नगर था, शंखपाल वहां का राजा था। उनके धन नामका सार्थवाह था उनके 'धन्या' नामकी पत्नी थी, धनपति और धनावह नामके दो पुत्र थे उन गृहस्थ की "गुण श्री" नामकी मैं पुत्री थी। मेरे विवाह के तुरन्त बाद ही मेरे पति की अकाल मृत्यु हो गई। इस कारण इस संसार पर मुझे विराग हो गया। मैंने विचार किया कि स्वजन का समागम ही वियोग के परिणाम वाला होता है, तो अब संसार का मोह नही करना चाहिये। इसके बाद विविध प्रकार के तप की आराधना में तल्लीन बन गई। एक वक्त 'चंद्र कांता' नामकी प्रवर्तनी परिवार सहित वहा पधारी, सखियों ने उनके संयम की मेरे पास प्रशंसा की। उन साध्वीजी को वंदन करने मैं जिन मन्दिर की ओर गई। सरस्वती देवी सदृश्य धर्म का उपदेश करते साध्वी जी मेरे देखने में आये, उनको देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि अहो उनका रूप व उनकी सौम्यता कितनी अद्भुत है? जिन मन्दिर में जाकर घण्ट बजाकर, दीपक प्रकटा कर व प्रभू जी की पूजा कर मैं साध्वी जी के पास आई। मैंने उनको वंदन किया, उन्होने धर्म लाभ दिया। साध्वी जी ने मुझ से पूछा "कौन हो? कहां से आई हो?" मैंने कहा भगवती! 'यही से' इतने में मेरे सखी ते कहा "हे भगवती! ये धन सार्थवाह की पुत्री गुण श्री है, कर्म परिणाम की विचित्रता से विवाह होते ही पति को मृत्यु हो गई। सखियों ने मेरा सारा वृतांत साध्वी जी को बतलाया। तब साध्वी जी ने कहा "वत्स! तू यहां आई यह बहुत अच्छा किया, यह संसार ऐसा ही दुःख रूप है। फिर उन्होने मुझे गृहस्थ का धर्म समझाया। मैने देश विरति रूप श्रावक धर्म अंगीकार किया। काफी समय बाद मेरे माता पिता मृत्यु को प्राप्त हुए तब मैंने दोनों भाइयों से दीक्षा लेने के लिए पूछा परन्तु उन्होने इजाजत नहीं दी और कहा "इस संसार में रह कर अपनी इच्छा मुजब धर्म कर"। इसके बाद मैंने जिन मन्दिर बनवाया, प्रतिमायें भरवाई, प्रभू भक्ति में खूब खर्च करने लगी। इस सबसे दोनो भाभियां मेरे ऊपर द्वेष करने लगी। मैंने विचारा "भाइयों का स्नेह मेरे लिए कितना है? इसकी परीक्षा कर। भाभियों के साथ मेरा क्या लेना देना है।"

एक रोज एक पहर रात्रि पूरी होने के बाद भाई धनपति ने शयन गृह में प्रवेश किया इसको जानकर हृदय मे कपट रखकर धर्म के उपदेश के बहाने से मेरी भौजाइयों से कहा "सुंदरी, ज्यादा क्या कहूँ? तेरे को साड़ी का (शीलका) रक्षण बराबर करना चाहिये"। सच्ची बात

है यह बोल कर उसने शयन गृह मे प्रवेश किया इससे पति ने सोचा कि यह निश्चय ही दुराचारिणी है नही तो मेरी बहन ऐसे क्यो बोलती। और उसने भाभी को घर से बाहर निकाल कर और चिन्ता करता करता सो गया। इधर भाभी ने विचारा कि "पति को पीड़ा पहुचाने वाला जीव किस काम का ? इससे मर जाना अच्छा है" यह चिन्तन करते व रोते रोते भाभी ने सारी रात बैठ २ बिताई।

प्रात काल भाभी शयन गृह से बाहर निकली, मैंने उससे पूछा "भाभी तुम्हारा मुख कमल कैसे मुरझा गया है" तब उसने कहा "बा ! कहो मेरा क्या अपराध है। तुम्हारे भाई ने मुझ से घर से बाहर जाने को कहा है' उसके वचन सुनकर मुझे दया आई और तुरन्त मैंने मेरे भाई से कहा "भाई ! यह क्या किया, मेरी भाभी का क्या अपराध है ? भाई ने कहा बहन, तेरी भाभी दु शीला है, ऐसी स्त्री सतति का नाश करती है, कुल को कलकित करती है और जगत मे निन्दा का पात्र बनाती है। मैंने कहा भाई "यह तुमने किस तरह जाना ? भाई बोला, गत रात्रि जब मैं घर आया तब तू उपदेश द्वारा उसे समझा रही थी। आश्चय के साथ मैं बोली "वाह भाई, वाह तुम्हारी भी क्या बुद्धि है मैं तो उसे भगवान की वाणी का उपदेश दे रही थी, मैंने उसको कोई ठपका दिया नही, वह असती है यह मैंने कहा नही। मेरे यह वचन सुन कर भाई को पश्चाताप हुआ। वह शरमा गया, फिर तो वह स्वय की स्त्री से लज्जित होकर क्षमा मागने लगा। फिर मैंने मेरे मन मे सोचा कि मेरा भाई मेरे ऊपर विश्वास रखने वाला है। बाद मे दूसरे भाई की भी इसी तरह खात्री की। दूसरी भाभी को केवल इतना कहा "ज्यादा क्या कहू ! परन्तु हाथ बराबर देखना और सही रखना" दूसरे भाई का मेरे प्रति विश्वास भी मैंने परख लिया।

इस तरह कपट करने से मैंने तीव्र कर्म का बधन किया। कितने ही समय बाद भाई और भाभियो के साथ दीक्षा ली। जीवन पयन्त पालन कर सब देव लोक मे गये। मेरे दोनो भाइयो का पहले च्यवन हुआ और वे चम्पा नगरी मे पुण्यदत्त की सम्पदा भार्या की कुक्षि से पुत्र रूप उत्पन हुए। वसुदेव और सागर उनके नाम पडे। मैं देव लोक से च्यवकर गजपुर मे शख सेठ की शुभ कान्ता भार्या से पुत्री रूप उत्पन्न हुई। मेरा नाम सर्वाङ्ग सुन्दरी पडा, मेरी दोनो भाभिया देव लोक से च्यवकर कौशलपुर नगर मे नन्दन नामक सेठ की देवला नाम की भार्या की कुक्षि से पुत्री रूप उत्पन्न हुई। उन दोनो के नाम श्रीमती और कान्तिमति पडा। श्रावक कुल मे जन्म लेने से मुझे जिन धर्म की प्राप्ति हुई। मैने यौवन अवस्था को प्राप्त किया।

एक वक्त मेरा पूर्व बधु वसु देव गजपुर से व्यापार करने को यहा आया, उद्यान से, मैं सखियो के साथ घर जाती थी तब मैं अपने पूर्व बन्धु के दिखने मे आ आई। वह मेरे पिता के पास आया और पूछा यह किसकी कन्या है ? मेरे पिता ने कहा 'मेरी कन्या है'। यह कहने पर उसने मेरी मागणी की। मेरे पिता ने कहा 'तुम मेरे साधर्मिक नही हो इसलिए मैं तुम्हे कन्या नही दे सकता। वसुदेव ने कहा 'तो मुझे तुम्हारा साधर्मिक बनाओ'। मेरे पिता ने जैन धर्म स्वीकार करने को कहा। कन्या के लोभ मे वह साधु महाराज के पास गया और कपट से दान आदि धर्म करने लगा, पर अन्त करण मे भाव नहीं था। काफी समय बाद वह मेरे पिता के पास आया और कहने लगा "मै आपका उपकार मानता हू। तुम्हारी कृपा से मुझे जैन धर्म प्राप्त हुआ हैं। देव-गुरु-धर्म का शुद्ध स्वरूप मेरे हृदय मन्दिर मे बैठ गया है, मुझे तत्व का ज्ञान प्राप्त हो गया है। आपकी कन्या प्राप्त करना तो अब गौण वस्तु बन गया है। मैं मेरे देश मे जाने वाला हू, आपकी आज्ञा लेने आया हूँ तुमने मुझे धर्म मे स्थिर किया इसका उपकार मानता हू।

इतना कहकर वह पिता के चरणों में नम गया। उसकी नम्रता से प्रसन्न होकर पिताजी वोले "वंधुदेव ! तुम हमेशा जैन धर्म के विषय में प्रमाद रहित रहना, धर्म, रत्न पुनः मिलना दुर्लभ है"। वचन सुन कर कर वह देश में चला गया। उसके वाद परिवार जनों की राय के उपरांत वंधुदेव के साथ मेरा विवाह हो गया। वह कई दिन श्वसुर गृह में रह कर वापस देश गया, बाद में मुझे ले जाने की इच्छा से वापस आया। रीति–रिवाज मुजव वास भवन में खूब सजावट की गई। धूप दीप किये गए। सुन्दर वास गृह में वन्धुदेव ने प्रवेश किया। इस अवसर पर कपट से वंधा हुआ पूर्व कर्म मेरे उदय मे आया। कर्म परिणाम से वहां कोई क्षेत्रपाल आया। उसने हम दम्पत्ति-युगल को देखा उसने कौतुक से वंधुदेव को ठगने और दोनों का समागम न होने देने क विचार किया। वह वास गृह के द्वार पर पुरुष वेष में आया और बोला "सर्वाङ्ग सुन्दरी कहां होगी"। यह पूछकर वह अदृश्य हो गया। यह वचन सुनकर वंधुदेव विचार में पड़ गया। उसके हृदय में कषाय पैदा हो गया। वह सोचने लगा "मेरे पत्नी अवश्य ही चरित्र हीन है नहीं तो कोई पर पुरुष उसके नाम से क्यों पूछता है। और वह वोल कर चला भी गया? वह वास भवन में आकर सो गया और खोटे विकल्प करने लगा। मैं काफी देर शय्या के किनारे वैठी रही पर वह जगा नही, भूमि मे वैठ कर मैंने सारी रात गुजार दी। प्रातः वह उटकर वगैर वोले चला गया। मैं शोकातुर वाहर आयी और वैठक में गई। इतने में मेरी सखियां आई और आग्रह पूर्वक शौक का कारण पूछने लगी। इस पर मैंने रात्रि का सारा वृतांत कह सुनाया। सखियां सोचने लगी इसका कारण क्या हो सकता है 'स्वामिनी निरपराध है, वन्धुदेव भी चतुर है, अतः इस प्रसंग में तो कर्म परिणती ही कारण है। इसके वाद मेरे पिता से पूछे वगैर ही वंधु देव चम्पापुरी चला गया। अपनी संतान के प्रति स्नेह से मेरे माता पिता वंधु देव पर कुपित हुए। उसके साथ व्यवहार वन्द कर दिया। धीरे धीरे मुझे इस संसार पर से वैराग्य आ गया। मैंने यह संसार छोड़कर दीक्षा लेने की भावना की। मेरे पुन्योदय से यशोमती नाम की एक प्रवर्तिनी इस नगर में पधारी। माता पिता की आज्ञा के वाद मैंने चरित्र ग्रहण कर लिया।

इधर वंधु देव ने कौशलपुर में नन्द की पुत्री श्री मति के साथ विवाह किया दूसरे भाई ने श्रीमति की वहीन कान्तिमति के साथ विवाह किया। उन दोनो दम्पतियों में खुव प्रेम हुआ। प्रसंग वस वे चम्पानगरी मे आकर रहे। किसी समम विहार करती हुई मैं चम्पापुरी मे आई और बंधुदत के घर मे गोचरी गई। श्रीमती और कान्तिमति पूर्व भव के अभ्यास से मुझे देख कर प्रसन्न हुई और प्रिति पूर्वक मुझे आहार दिया। फिर मैंने उनको धर्म का उपदेश दिया। उसने उनके हृदय में स्थान पाया, और वे दोनो श्राविकाये वन गई। उन्होंने मुझे विनती की कि आप हमारे घर पधारा करे ताकि हमारा परिवार धर्मी वने।

हमारे प्रवर्तिनी जी की आज्ञा से मैं वहाँ जाने लगी। मेरे पूर्व कर्म के योग से वह व्यंतर यहां भी मुझे विघ्न करने को तैयार हुआ-उसके मन में विचार हुआ "उनका धन चुराने पर भी उनका साध्वी जी पर कितना प्रेम है इसकी परीक्षा करूं"। किसी रोज मैं उनके यहां गई तो कान्तिमति को वास भवन में छावडी में रखे हुये हार को पिरोते देखा। मै वहां गई, वह खडी हुई और विधि पूर्वक वंदन किया, मैंने अपने साथ की साध्वी जी को उपदेश के लिये वैठा कर उपाश्रय जाने को तैयार हुई। तव कान्तिमति ने कहा "हे आर्ये। आज आपका पारणा है तो यह प्रासूक आहार ग्रहण करो। मैंने आज्ञा दी तो साध्वीजी आहार लेकर कान्तिमति के साथ निकली। उस काल में वह व्यंतर प्रयोग से चित्र मे रहे हुये मयूरपक्षी ने हार लेकर, अपने पेट

मे दाखिल कर स्वय के स्थान पर वैसा का वैसा बन गया। तब मैंने विचारा 'यह कैसा आश्चर्य मेरे बडे साध्वी जी को मैं पुछु गी। मैं वासगृह से बाहर निकली पर हृदय मे क्षोभ हो रहा था। उसी वक्त कान्तिमति वापस वास भवन मे पहुँची और अपना हार खोजने लगी। नहीं मिलने पर अपने परिजनो से पूछा परिजनोने कहा "यहा साध्वीजी सिवाय दूसरा कोई आया ही नहीं इसलिये उनसे पूछो"। कान्तिमति ने परिजनों से कहा "ऐसा क्या बोलते हो"। पत्थर और स्वर्ण को एक सदृश्य गिनने वाले साध्वी जी क्या चोरी करेंगे ? वह बात लोक मे फैल गई। मैंने प्रवर्तिनी जी को सारा वृतात कहा। उन्होंने कहा "हे वत्से ! कर्म के परिणाम विचित्र होते हैं। उनके सामने कोई बात भी असम्भवित नहीं है। इससे तप और सयम का अधिक प्रयत्न करना चाहिये। अब तक उसके घर मत जावो और शासन की लघुता न होवे एसा प्रयत्न करो। जो शासन मे हीनता आवे तो धर्म बुद्धि का हनन होता है इससे मनुष्य के परीणाम बीगडते हैं-बादमें जिनाज्ञा का भग होता है इससे सम्यक्त्व का नाश होता है और इससे लम्बे समय तक समार मे भटकना पडता है। इसलिये शासन की लघुता हो ऐसा नहीं करना चाहिये"।

प्रवर्तनी जी के वचनों को सुन कर मैंने तप करना आरम्भ किया और उनके घर जाना बद किया। उन दोनो श्रविकाओ को मेरे लिये किसी तरह की शका, नहीं आई पर परिवार के लोग मेरे पर शका करने लगे। जब मैं उनके घर नहीं गई तो दोनो श्राविकाओ ने सोचा "सकट आने की शका से शायद साध्वी जी यहाँ न आते हों तो चलो अपने चले" यह सोचकर दोनो श्राविकायें मेरे पास आई इतने मे क्षपक श्रेणि मे चढते हुये मुझे केवल ज्ञान होगया। मेरे मे कर्मों का अभाव होने से उस व्यतर ने मयूर पक्षी के पास से हार जहा था तहा रखवाया। हे महाराज ! मेरे कर्म का परिणाम इस प्रकार है '।

यह सारी हकीकत जानकर पर्षदा विस्मित हुई। ओह ! इतने से दुष्कृत का इतना विपाक ! यह विचार कर राजा और वधुदेव ने कहा "भगवती, तुमने काफी दु ख सहन किया। यह सुनकर मैंने कहा "सौम्य ! चार गति मे भ्रमण करने वाले प्राणीयो को ससार मे ये कठोर दु ख भोगने पडते है, इनकी गिनती कौन कर सकता है। उनके आगे मेरा दु:ख क्या है ? इसलिये हे भव्य प्राणीयो ! भोग का त्याग करो, निर्दोष सुख को देने वाले जिन भाषित धर्म का सेवन करो"। केवल ज्ञानी साध्वी जी के उपदेश से सारी सभा ने वैराग्य को प्राप्त किया। राजा और वधुदेव ने व्रत किये और नम्रता से बोले "भगवती, हमारी दीक्षालेने की इच्छा है" और इसके बाद राजा अमर सेन, वधुदेव और दूसरे प्रधानो ने दीक्षा अ गीकार की।

इस प्रकार सोमा प्रवर्तिनी के व्याख्यान से राजा अमर सेन, बधुदत्त आदि ने महाव्रत अ गीकार कर जीवन को सार्थक बनाया।

साध्वी-वन्दन : सैद्धान्तिक दृष्टि से

(लेखक—मुनिनेमिचन्द्रजी)

जैन धर्म सदा गुण पूजक धर्म रहा है। वेष-पूजा, लिगपूजा या क्रियापूजा जैन सिद्धान्त की दृष्टि से बाधक है। इस विषय में ठोस ऐतिहासिक और प्राग ऐतिहासिक प्रमाण मिलते है। जैन धर्म ने अपने माने हुए तीर्थ (संघ), वेष, तीर्थंकर या लिंग आदि का आग्रह न रख कर इस बात को सैद्धान्तिक रूप में स्वीकार किया है कि मोक्ष प्राप्ति की साधना करने वाला चाहे जिस संघ, वेष, लिंग या देश का हो या पुरुष, गृहस्थ हो या साधु, किसी भी महापुरुष द्वारा प्रतिबोधित हो या स्वयं प्रतिबुद्ध हो, क्रमशः उच्चगुण स्थान पर पहुँच कर सिद्ध (मुक्त) हो सकता है! इस दृष्टि से एक पुरुष जसे साधु बनकर उच्च साधना करके मोक्ष प्राप्त कर सकता है, वैसे एक स्त्री भी उच्च साधना करके मोक्ष प्राप्त कर सकती है। परन्तु ऐसी उच्च साधनारूढ़ पूर्व दीक्षित साध्वी गृहस्थ पुरुषों द्वारा अथवा पश्चात् दीक्षित साधुओं द्वारा वन्दनीय नही हो सकती, या वह व्याख्यान नही दे सकती, यह यह बात 'वदतो व्याघात' जैसी उपहासास्पद है।

एक ओर गुणों—ज्ञान-दर्शन-चारित्र—के आधार पर वन्दनीयता मानना और दूसरी ओर से यों कहना कि स्त्री (साध्वी) चारित्र मे चाहे जितनी आगे बढ़ी हुई हो पुरुषों द्वारा या बाद में दीक्षित साधुओ द्वारा वंदनीय नहीं है, यह बात सिद्धान्त विरुद्ध नही तो क्या है?

पांच महाव्रत साधुओ और साध्वियों दोनों में समान रूप से होते है और दोनों को पांच महाव्रतों का पालन करना अनिवार्य होता है। शास्त्र में जहां कही भी किसी व्रत नियम या त्याग की बात आई है, वहां भिक्खू वा भिक्खू णी वा समणा या समणीओं अलग इस प्रकार दोनों के लिए अलग-पद आते है। साधुओं में कोई छठा महाव्रत नही है, तथैव साध्वियो मे पाच महाव्रतों से कम महाव्रत नही है। दोनों के महाव्रत नियम या मौलिक धर्म क्रियाएं (मूल गुण-उत्तर गुण) एक समान होते हुए भी सिर्फ स्त्रीलिंग या साध्वी वेष के कारण ही अल्पकाल दीक्षित साधुओं द्वारा दीर्घकाल दीक्षित साध्वी वंदनीय नही हैं यह कहना भी सैद्धान्तिक अज्ञता का सूचक है।

समग्र जैन-आगमों में वंदना का एक सिद्धान्त निश्चित किया हुआ है, वह है रत्नाधिक क्रम के आधार पर। रत्नों—सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र रत्नों में जो अधिक हो, यानि जिसने महाव्रत (चारित्र) पहले अंगीकार किये है, साधु दीक्षा पहले ली है, उसे पहले नमस्कार या वन्दना और जिसने बाद मे दीक्षा ली है, उसे बाद मे। साधु साध्वियों में वन्दना नमस्कार के इस क्रमिक व्यवहार (कल्प) को कल्पसूत्र में 'किईकम्मे' (कृतिकर्म या कृतिक्रम) कहा गया है। यों तो 'नमो लोए सव्व-साहूणं में समुच्चय में समस्त साधुओ और साध्वियों को नमस्कार सूचित किया गया है, मगर संघ व्यवस्था की दृष्टि से 'किईकम्मे' नामक कल्प द्वारा दीक्षा पर्याय के क्रम से वन्दना-नमस्कार निश्चित किया गया है। इस क्रमिक वंदन के सिद्धान्त से दीक्षा-ज्येष्ठ साध्वी दीक्षा लघु साधु या साध्वी द्वारा वन्दनीय ठहरती है। सम्पूर्ण आगम साहित्य में कोई भी प्रमाण या सिद्धान्त इसके विरोध में नही

मिलता, वल्कि रत्नाधिक्रम से वन्दन (कृतिकर्म) नामक कल्प से इसे समर्थन मिलता है।

यह कहना भी यथार्थ नहीं है कि साध्वी दीक्षा मे चाहे जितनी वडी हो, उसे आज के दीक्षित साधु को भी उसे वन्दना-नमस्कार करना चाहिए, पुरिस-जेट्ठा (पुरुषज्येष्ठ) कल्प से यह सिद्ध होता है लेकिन 'पुरुषज्येष्ठ' पद से यह सिद्ध नही होता कि पुरुष (साधु) दीक्षा चाहे जितना छोटा हो, दीर्घ दीक्षित साध्वी को उसे वन्दना करनी ही चाहिये। क्योंकि पुरुषज्येष्ठता से वदना सिद्ध नहीं होती। वन्दना के लिए निर्णायक कल्प तो 'किईकम्मे' है जिसका अर्थ पहले दिया जा चुका है। 'पुरुषज्येष्ठ' पद से तो यह सिद्ध हो सकता है कि पुरुषो द्वारा इस धर्म की प्ररूपणा या प्रवर्तना प्रारम्भ मे की गई है, इसलिए वह प्रधान है। जैसे 'श्रमणसघ' से साधु प्रथम नंबर मे है, साध्वी दूसरे नंबर पर, श्रावक तीसरे नंबर मे, और श्राविका चौथे नंबर मे है। दर्जे के अनुसार तो यहा साधु पद और श्रावक पद दो ही है। एक साधु (अनगार) धर्म के पालक है, दूसरे श्रावक (आगार) धर्म के पालक हैं। इस दृष्टि से साधु भले ही श्रमणसघ मे प्रथम नंबर पर हो, मगर वन्दना नमस्कार साधु साध्वियो मे परस्पर रत्नाधिक क्रम से ही हो, यह सिद्धान्त और व्यवहार की दृष्टि से तथा न्याय सगतता की दृष्टि से सिद्ध होता है। अगर 'पुरिसजेट्ठा' पद से दीक्षा पर्याय मे ज्येष्ठ साध्वी को वन्दना का निषेध सिद्ध किया जाय तब तो किईकम्मे' पद व्यर्थ ठहरता है।

मेरी दृष्टि मे पुरिसजेट्ठा' पद का अर्थ जैन के 'गुणिषु प्रमोदम्' के अनुसार आत्मा का ज्येष्ठत्व यथार्थ जचता है। क्योंकि जैन सिद्धात की दृष्टि है देश, वेष, लिंग या शरीर सभी की अपेक्षा से आत्मा की अपेक्षा ज्येष्ठता मानी गई है। यानी जिनकी आत्मा गुणो मे, साधना में, ज्ञान-दर्शन-चारित्र मे अधिक विकसित है, आगे बढी हुई है, उसी आत्मा को ज्येष्ठ मानना चाहिए, स्त्री शरीर या पुरुष शरीर की अपेक्षा से नही। अगर पुरुष (साधु) की चाहे वह ज्ञान-दर्शन चारित्र या साधना मे पीछे हो, और स्त्री (साध्वी) चाहे वह ज्ञानादि मे या साधना मे आगे बढी हुई हो दीर्घकाल दीक्षित हो, मगर पुरुष शरीर होने से पुरुष ही ज्येष्ठ है, यह निर्णय पक्षपात-पूर्ण प्रतीत होता है, न्याय सगत नही। मगर आत्मा को ज्येष्ठ मानना सिद्धान्त सगत और उचित है। साख्य दर्शन एव योगदर्शन मे आत्मा के लिए 'पुरुष' शब्द का प्रयोग किया गया है। 'य पुरुष स एवाऽहम्' 'जो पुरुष (आत्मा) है, वही मैं हू' यह उपनिषद्-वाक्य इसका समर्थन करता है।

जैन शास्त्रो मे अनेक जगह भ महावीर के समवसरण मे साधु साध्वियो के मिलने और एक जगह इकट्ठे होने का उल्लेख आता है। उदाहरण के तौर पर दशाश्रुत स्कन्ध मे उल्लेख है, जिस समय भ महावीर के समवसरण में साध्वियां और साधु इकट्ठे हुए थे और श्रेणिक राजा तथा चिल्लणा रानी का रूप देखकर वे नियाणा (निदान) करने के लिए तैयार हो गये थे। उस समय भ महावीर ने उन साधु-साध्वियो को आलोचना करवाकर प्रायश्चित्त देकर शुद्ध किये थे। परन्तु वहाँ या दूसरे किसी शास्त्र मे साध्वियो द्वारा साधुओं को वदना करने का उल्लेख नही है। अगर पुरुष ज्येष्ठता वाला कल्प वदना सूचक होता तो वहाँ दीक्षा लघु साधुओ को दीक्षा मे ज्येष्ठ साध्वियो द्वारा वदना करने का उल्लेख अवश्य होता।

वर्तमान काल मे दीर्घकाल दीक्षीत साध्वी द्वारा लघु या नव दीक्षीत साधु को भी वन्दना करने की जो कुरूढि (सिद्धान्त सगत न होते हुए भी) चल रही है उसके पीछे युग का एव पडौसी सम्प्रदायो का प्रभाव मालूम होता है।

जैसे पडौसी सम्प्रदायो मे छुआ छूत और जन्मना जाति वाद का प्रचलन है, उसका जैन धर्मी लोगो पर भी प्रभाव पडा। जैसे सिद्धान्त विरुद्ध इस कुप्रथा को जैन समाज ने गले लगा लिया, इसी प्रकार दीर्घ दीक्षित साध्वी द्वारा अल्पकाल दीक्षित साधु को वन्दना करने की कुप्रथा भी अपनानी हो तो कोई सन्देह नहा। उस युग मे जब कि नारी जाति को दबाया जाता था, नीची समझी जाती थी, उसको धर्म शास्त्र सुनने और सन्यास लेने का

अधिकार नहीं था, इसी की छाया जैन समाज पर पडी हो और उसने इस सिद्धान्त विरुद्ध प्रथा को अपना ली हो तो कोई आश्चर्य नही। और उस प्रथा को व्यवहार में प्रचलित करने के लिए आचार्यों ने 'पुरिसजट्ठा' पद द्वारा प्रमाणित किया हो। और टीकाओ मे इस सिद्धान्त विरुद्ध वात का उल्लेख किया हो। हर एक आचार्य और विचारक पर उस युग की छाया पड़ी है। युग की छाया से प्रभावित होकर ही नारी जाति को नीची बताने के लिए गोस्वामी तुलसी दास जी ने भी "शूद्र गंवार, ढोल, पशु नारी। ये सब ताडन के अधिकारी" कहा है। युग के अनुसार ही नारी जाति को पर्दे के बधन में डाला गया। उसी प्रकार किसी युग में किसी स्त्री को साध्वी दीक्षा न देने का विधान किया होगा, फिर उनके द्वारा व्याख्यान देने पर प्रतिवन्ध लगाया होगा। परन्तु जैसे आज भारत मे कई कुरूढ़ियाँ और कुप्रथाएं जमाने के अनुसार विकास घातक, अन्याय कारक, अपमान जनक होने से बदल दी गई है, वैसे ही साध्वी के विकास को रोकने वाली तथा अन्याय-कारक व अपमान जनक व्याख्यान देने के प्रतिवन्ध की और मघु साधु को वन्दना करने की कुप्रथा को बदलनी चाहिए। ऐसा करने में सिद्धान्ततः कोई अड़चन नहीं, और न आज्ञा भंग की ही बात है। उपदेश माला आदि ग्रन्थों की वात अव्वल तो आगमवत् प्रामाणिक नही मानी जा सकती और वह बाद के आचार्य की कृति से युग की छाप उसमे स्पष्ट परिलक्षित होती है।

अतः जैन समाज को शीघ्र ही इस ओर ध्यान देना चाहिए और जैन साधुओं को अपने पुरुषत्व का अहं तथा एकान्तवाद का कदाग्रह छोड कर दीर्घकाल-दीक्षित (दीक्षा ज्येष्ठ) साध्वी को वन्दना की इस सत्य और सिद्धान्त सम्मत वात को स्वीकार करना चाहिए।

———

ज्ञान–विज्ञान

—पारस बाफना

ज्ञान सबके लिए संभव है। ज्ञान की मनुष्य जीवन में व्यवहारिकता ही श्रेष्ठता है। मानव की श्रेष्ठता संपूर्ण समाज के लिए कल्याणकारी एव हितकर है। प्रकृति मे जीवन की सयत्रता को समझना और एक कुशल एव स्वस्थ सयत्र-के रूप मे विकसित होना ही मानव का ज्ञान और उसकी सार्थकता है। जीवन की क्रियाशील इस सयत्रता मे सचालित और सुचालित होना और अन्य के प्रति उस ज्ञान के अनुरूप समकक्ष बनना, सहयोग और समन्वय प्राप्त करना तथा हार्दिक सहयोग और सयोग देना इस तरह विविधि सयत्रो के साथ एक प्रगतिशील नए सामाजिक सयत्र को रूप देना और उसमे विकास को योग देना मानव की एक प्राकृतिक नैतिकता है।

इससे परे, कोई भी किसी को ज्ञान, नैतिकता तथा शुद्ध व्यवहार नही सिखा सकता।

समय बीतते २ व्यक्ति से घर, घर से कुटुम्ब २ से समाज और समाज मे राष्ट्र तथा राष्ट्र से शनै शनै सम्पूर्ण विश्व इस एक ज्ञान और नैतिकता के आधार पर एक पूर्ण सुव्यवस्थित एव सुयन्त्रित सयन्त्र के रूप मे विकास करता है।

यही ज्ञान है—
यही विज्ञान है—
यही जीवन है—
और यही जीवन की पूर्णता है।

शरीर को कष्ट देकर जीने वाली तपस्या व्यर्थ है—

इस सन्दर्भ मे महात्मा बुद्ध ने स्वय तपस्या करके अनुभव किया और यह प्रमाणित करके ससार की आख खोल कर रख दी।

राजकुमार सिद्धार्थ को सभी प्रकार का सुख था राज्य मे उनके लिए कोई भी तरह की कमी न थी लेकिन जब उन्हे यह अनुभव हुआ कि मानव देह का एक दिन दु खान्त होना निश्चित है वे रोग मृत्यु और वृद्धावस्था से मुक्ति पाने का मार्ग खोजने लगे।

एक दिन सिद्धार्थ ने एक सौम्य शान्त चित्त सन्यासी को देखा-वह अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा मे लीन था। सासारिक मोह बन्धनो को त्याग चुका था। उसके मुख पर एक प्रकार का तेज था जिसने सिद्धार्थ को अपना मार्ग बदलने के लिए प्रभावित कर दिया।

सिद्धार्थ को सन्यासी का मुक्त जीवन पसद आया। इस घटना ने सिद्धार्थ की विचार धारा मे ठोस परिवर्तन कर दिया और वह उस सन्यासी की तरह स्वय सन्यासी बनने का दृढ निश्चय कर बैठा। वह प्राय एकान्त मे ध्यान मग्न बैठे रहने का प्रयत्न करने लगा।

शुद्धोदन राजा को जब राजकुमार सिद्धार्थ की इस बदलती हुई प्रवृति का अनुभव हुआ तो उसने विवाह रूपी बेडियो मे राजकुमार को जकडने का प्रयास किया। राजकुमार की प्रवृत्ति को बदलने का राजा को यह उपयुक्त मार्ग ध्यान मे आया। अत राजकुमार को बडी धूम धाम से यशोधरा के साथ ब्याह के बन्धन मे बाध दिया।

वे इस बन्धन मे कुछ वर्ष बन्धे रहे। कालान्तर मे उनके एक पुत्र हुआ जिसका नाम राहुल रखा गया।

राजा ने इस शुभ अवसर पर बडे उत्सव का आयोजन किया, बहुत दान दिये, भोजन वस्त्रादि दान किये एव बहुत सी दान दक्षिणा दी और राजा ने यह अनुभव किया कि सिद्धार्थ का मन ससार की ओर झुक गया है लेकिन सिद्धार्थ अभी भी सासारिक सुख दु ख एव मृत्यु पीडा, वृद्धावस्था एव

मृत्यु) से मुक्ति पाने का मार्ग ढूंढ रहा था।
इसी बीच उनकी भेंट एक प्रतिभाशाली तपे हुए तपस्वी से हुई। साधु ने सिद्धार्थ को मोह-माया का उपदेश दिया जो इन पर पूर्णतया असर कर गया। सिद्धार्थ ने २९ वर्ष की अवस्था में सुख वैभव से सम्पन्न घर वार त्याग दिया और उस परम सुख की खोज में निकल पड़े जिसे प्राप्त करने के पश्चात् मनुष्य को किसी प्रकार की कोई भी कामना नही रहती।

अर्द्ध रात्रि में सिद्धार्थ उठे, राहुल को छाती से लगाकर एकबार पत्नी और पुत्र के मुख को देखा और गृह-त्याग कर सदैव के लिए चल दिये (महाभिनिष्क्रमण) नाम से यह घटना आज प्रसिद्ध है।

सन्यासियों के वस्त्र धारण किये, केशों को मुंडवा दिया और सिद्ध-साधना के मार्ग पर चल पड़े, उनके सामने अब एक ही लक्ष्य था-ईश्वर की प्राप्ति।

सिद्धार्थ गुफा में रह कर तपस्या करने लगे। केवल एक बार नगर में भिक्षा के लिए जाते और शेष समय अपनी साधना में लगे रहते।

एक बार राजा ने सिद्धार्थ को वापिस महल मे ले जाने के लिए बहुत प्रयास किये परन्तु असफल रहे।

सिद्धार्थ ने कहा "राजन्! मैं संसार के मोह को त्याग चुका हूं। मैं एक उद्देश्य लेकर घर से निकला हूं, जब तक वह पूर्ण नही हो जाता, मैं अपने मार्ग से विचलित नही हो सकता, चाहे मुझे भयंकर से भयंकर बाधाओं का सामना करना पड़े।"

सिद्धार्थ ने किसी योग्य गुरू की खोज की लेकिन उनकी यह जिज्ञासा भी पूरी नहीं हुई अन्त मे रुद्राकाचार्य के आश्रम पहुंचे वहां भी उनकी आकांक्षा शांत नही हुई, अन्त मे वे वहां से भी चल पड़े और आश्रम के पांच शिष्य उनके साथ हो लिए। अनेकानेक स्थानो का भ्रमण करते हुए अन्त मे वे एक नदी के तटपर घोर तपस्या मे लीन होगये। यहां पर आपने छः वर्ष तक कठिन तपस्या की। ६ वर्ष तक भोजन पानी छोड़कर शरीर को बहुत कष्ट दिया उनकी देह अत्यन्त दुर्बल हो गई। यहां तक कि उनमें खड़े होने तक की शक्ति न रही।

अपनी फूल सी कोमल देह को इतना [illegible] देकर भी उन्हें उस ज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई [illegible] की खोज मे वे निकले थे। तब सिद्धार्थ को [illegible] अनुभव हुआ कि शरीर को कष्ट देकर [illegible] की वाली तपस्या व्यर्थ है—इससे न तो आत्मा [illegible] शान्ति मिलती है न ज्ञान ही प्राप्त होता है [illegible] उन्होंने खाना पीना आरम्भ कर दिया। उनके पांचो साथी उन्हें पथ भ्रष्ट समझ कर [illegible] छोड़कर चले गये। सिद्धार्थ अब अकेले थे। वे [illegible] पड़े और सैनानी ग्राम के निकट एक बोधि वृक्ष [illegible] नीचे अपना आसन लगा कर बैठ गये।

प्रातः काल जगत सेठ की पुत्री सुजाता खी[illegible] लेकर सिद्धार्थ के पास आई जिसे इन्होंने सहर्ष ग्रह[illegible] की। उसी दिन से नित्य प्रति ग्राम से प्राप्त [illegible] वे खाने लगे और इसी तरह यही पर आसन जम[illegible] सिद्धार्थ को एक दिन उस महान ज्ञान [illegible] प्राप्ति हुई जिसकी खोज में वह घर से निकले थे सिद्धार्थ को यही बुद्धि या ज्ञान की प्राप्ति हुई अ[illegible] यही पर से वे महात्मा गौतम बुद्ध कहलाये।

ज्ञान की महत्ता इसी मे है कि सारे संसार [illegible] इसे बांट दिया जाय ताकि संपूर्ण विश्व के मान[illegible] समाज मे ज्ञान की ज्योति जग-मगा जावे।

महात्मा बुद्ध ने अपना एक लक्ष्य बनाया अ[illegible] दृढ़ निश्चय किया किया कि जो ज्ञान इन्हें प्राप्त हुअ[illegible] है उस ज्ञान को वो सम्पूर्ण विश्व में फैला दे। अ[illegible] उनका यह दृढ निश्चय परिलक्षित हुआ। सं[illegible] के कोने कोने में गौतम बुद्ध के भिक्षु भ्रमण करने लगे और और उनके ज्ञान की ज्योत को ज[illegible] लगे। धीरे धीरे विश्व के कोने कोने में बुद्ध क[illegible] यह ज्योत प्रकाशमान होने लगी जिसने कर[illegible] अन्धेरे घरों में अरबों स्त्री पुरुषों के जीवन मे इस ज्योत को जगमगा दिया।

गौतम बुद्ध की यह धारणा थी कि यह ज्ञान समस्त मानव जाति प्राप्त करे जिससे मनुष्य सच्चे मार्ग पर चल सके।

गौतम बुद्ध ने उपदेश दिया—"**कठोर तप कर शरीर को कष्ट देना और विलास में लिप्त रहना दोनों व्यर्थ हैं। इन दोनों के बीच मध्यम मार्ग अपनाओ।**"

१—पाप न करो
२—हिंसा न करो
३—झूठ न बोलो
४—हिमल, द्वेष को हृदय में स्थान न दो।
५—सब जीवों मे प्रेम करो।
६—सत्य धर्म का पालन करो।

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

पांचवीं निर्वाचित महासमिति

भाद्रपद शुक्ला १ स० २०२६ मे अगले तीन वर्षो के लिए निर्वाचित महासमिति सघ की सब प्रवृत्तियो का सचालन करती रहेगी। प्रति तीसरे वर्ष सघ की ओर से महासमिति का निर्वाचन होता है, यह पाचवी निर्वाचित महासमिति है।

पदाधिकारियो सहित सदस्यो की नामावली

१	श्री शाह कस्तूरमल जी	अध्यक्ष
२	,, हीराचन्द जी एम शाह (भण्डार)	उपाध्यक्ष
३	,, हीराचन्द जी वैद	सघ मन्त्री
४	,, सरदारमल जी लुनावत्	भण्डाराध्यक्ष
५	,, जतनमल जी लुणावत	हिसाब निरीक्षक
६	,, पुष्पमल जी नोढा (जोधपुर)	अर्थ मन्त्री
७	,, शिखरचन्द जी पालावत (अलवर)	मन्दिर व्यवस्था मन्त्री
८	,, रणजीतसिंह जी भण्डारी	उपाश्रय मन्त्री
९	,, घनरूपमल जी नागौरी (छोटी सादडी)	शिक्षण मन्त्री
१०	,, जवाहरलाल जी चोरडिया (आगरा)	व आय शाखा मन्त्री
११,	,, केसरीसिंह जी पाचेला	सदस्य
१२	,, रूपचन्द जी चोरडिया	,,
१३	,, फतेहसिंह जी करनावट (किशनगढ)	,,
१४	,, कपिल भाई के शाह	,,
१५	,, जसवतमल जी सांढ	,,
१६	,, विलमचन्द जी सिंघी (जोधपुर)	,,
१७,	,, शान्तिलाल जी वाफना (पाली)	,,
१८	,, हजारीचन्द जी मेहता (जोधपुर)	,,
१९	,, बाबूलाल जी पट्टनी (पजाब)	,,
२०	, लक्ष्मीचन्द जी भसाली (पजाब)	,,
२१	,, रतनचन्द जी सिंघी	,,
२२	,, हरीशचन्द जी मेहता (जोधपुर)	,,
२३	,, कुन्दनलाल जी छाजेड	,,
२४	,, शिखरचन्द जी कोचर	,,
२५	,, उदयसिंह जी मेहता (सोजत)	,,
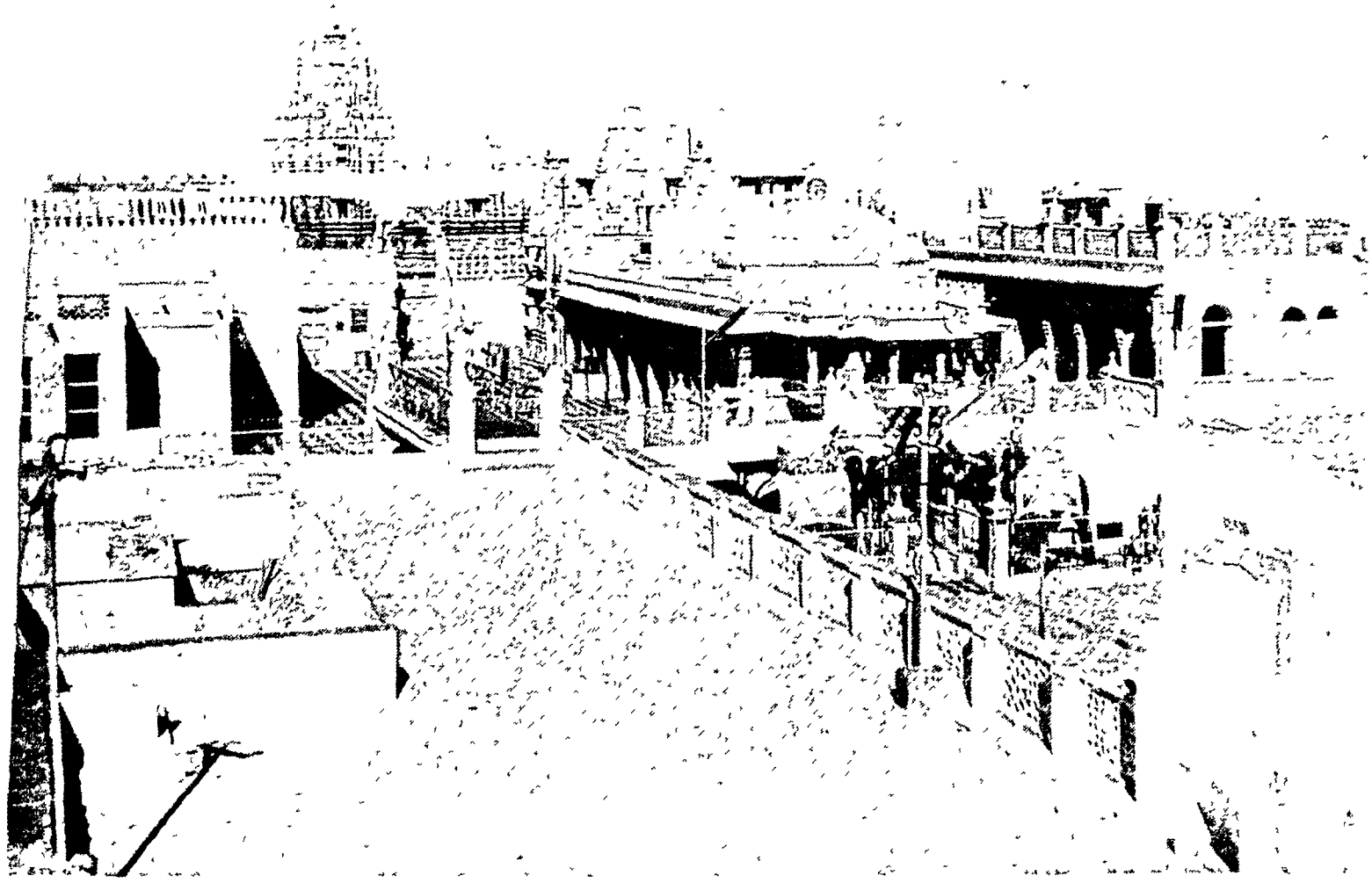
राजस्थान का प्रमुख जैन श्वेताम्बर तीर्थ, नाकोड़ा

卐 मणिभद्र 卐

श्री वल्लभ जन्म शताब्दी
एवं
श्री कच्छ यात्रा प्रवास
विशेषांक
कार्तिक शुक्ला २ सं. २०२७

प्रकाशक :
श्री जैन श्वेताम्बर तपाग
ठि० आत्मानन्द जैन सभा भ
घी वालों का रास्ता,
जयपुर-३ (राजस्थान)

मणिभद्र

वल्लभ जन्म शताब्दी
एवं
कच्छ यात्रा प्रवास विशेषांक

युग प्रवर श्री विजय वल्लभ सूरिश्वरजी

जन्म	स्वर्ग	शताब्दी
कार्तिक शुक्ला २	आसोज वद ११	कार्तिक शुक्ला २
वि. स० १९२७	वि० स० २०११	वि. स० २०२७

मैं क्या चाहता हूं।

होवे कि न होवे परन्तु मेरी आत्मा यही चाहती है कि साम्प्रदायिकता दूर हो कर जैन समाज, मात्र श्री महावीर स्वामी के झण्डे के नीचे एकत्रित होकर श्री महावीर की जय बोले, तथा जैन शासन की वृद्धि के लिए ऐसी एक "जैन विश्वविद्यालय" नामक संस्था स्थापित होवे। जिससे प्रत्येक जैन शिक्षित होकर, धर्म को बाधा न पहुंचे, इस प्रकार राज्याधिकार में जैनों की वृद्धि होवे।

फलस्वरूप सभी जैन शिक्षित होवे और भूख से पीडित न रहे। शासन देवता मेरी इन सब भावनाओं को सफल करे, यही चाहता है।

—वल्लभ सूरी

क्षमायाचना

पर्वाधिराज के बाद इस शताब्दी के अवसर के लिए एक विशिष्ट प्रकाशन निकालने की भावना थी—प्रथम तो कच्छ की ओर यात्रा संघ ले जाने का निश्चय हो गया—दूसरा वापस आने पर स्वास्थ्य ने जवाब दे दिया—तीसरा देश भर में अनेक जगह से इस तरह की स्मारिकायें निकाली जा रही है, उनमें भी इस सम्बन्ध में मुझे भी कुछ लिखना पड़ा—और जिनके लेखों के लिए आशान्वित था—वे भी प्राप्त होना कठिन हो गये चौथे—दीवाली के अवसर पर यहां नगरपालिका चुनावों से प्रेसों का कार्य भी कुछ संभव से असंभव हो गया, इसलिए—यात्रा स्मारिका के साथ ही पूज्य गुरुदेव सम्बन्वित थोड़ा साहित्य दे कर ही संतोष कर लेना पडा—इसके लिए क्षमायाचना

—हीराचन्द वैद

जीवन झांकी

आज से पूरे १०० वर्ष पूर्व यानी कार्तिक शुक्ला २ बुधवार वि० स० १६२७ को गुजरात प्रात के बडोदा शहर में बीसा श्रीमाली श्रावक कुल भूषण सेठ श्री दीपचन्दजी घर सती शिरोमणी सेठानी इच्छाबाई ने अपनी कुक्षि से एक पुत्र रत्न को जन्म दिया। भाई दोज का दिवस वैसे ही भारतीय सस्कृति मे अपना विशिष्ट स्थान रखता है, बहिन भाई का प्रेम इस रोज सदैव से भी ज्यादा उमड पडता है। उस पर भी इस आत्मा के जन्म से पूर्व तो इनकी माता ने इनके गर्भ मे आने पर एक स्वप्न देखा था कि माता ने अपने इस पुत्र को तीर्थंकर के चरणो में समर्पित कर दिया। जन्म का समय भी और स्वप्न का योग भी आगे जाकर सही साबित हुये। बहिन-भाई का प्रेम ही नहीं आगे बढ कर वह तो प्राणीमात्र का प्रेमी बन गया और तीर्थंकर क धर्म को दिपाने वाला एक महानतम आचाय।

इस बालक का नाम छगनलाल रखा गया— पूत के पाव पालने मे ही दिखने लगे। बाल्य काल मे ही इनकी रुचि वैरागी जीवन की ओर हा गई, आपके बडे भ्राता खीमचन्द भाई को यह सब पसन्द न था। वे बराबर इनका विरोध करते रहे पर आपका निश्चय तो दृढ था। १७ वर्ष की अल्प आयु मे वैसाख सुद १३ स० १६४४ को राधनपुर में उस वक्त के महान् क्रान्तिकारी सन्त श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराज के पास भगवती दीक्षा अगीकार कर ही ली और तब से ही वे छगनलाल से वल्लभ विजय कहलाने लगे। आत्मारामजी म० के प्रशिष्य मुनि श्री हर्ष विजयजी के शिष्य घोषित किये गये।

बुद्धि तो तीक्ष्ण थी ही अपने गुरु के पास रह कर अल्प समय मे ही शास्त्रो का अच्छा अध्ययन आपने कर लिया। आपके हस्ताक्षर भी मोती के सदृश थे। आत्मारामजी महाराज आप से इतने प्रसन्न थे कि पाश्चात्यविद्वान डा० हार्नल के प्रश्नोत्तरों की प्रतिलिपि आप ही से कराते थे— आगे तो फिर जितने भी ग्रन्थ आचार्य देव ने लिखे उन सब की प्रेस कापिया तथा सारा पत्र व्यवहार आपके द्वारा ही कराया जाने लगा। गुरु की इतनी असीम कृपा हो फिर शिष्य का ज्ञान क्यो न हर प्रकार से बढ जावे। अभी आपकी बडी दीक्षा सम्पन्न भी नहीं हुई थी, फिर भी पालनपुर मे सात नये साधुओं को अध्ययन आप कराते थे, यह आपकी योग्यता और प्रतिभा की बेजोड मिसाल थी।

२ वष बाद वैसाख शुक्ला १० को राजस्थान के प्राचीन नगर पाली मे आच य भगवत के हाथो बडी दीक्षा सम्पन्न हुई। आपका अध्ययन निरतर चलता रहा, गुरु के प्रति विनय की तो पराकाष्ठा ही थी। यकायक स० १६४७ चैत्र सुद १० को आपके गुरु श्री हर्ष विजयजी महाराज सा० दिल्ली मे कालधर्म को प्राप्त हो गये। यह आपके जीवन पर बहुत बडा आघात था—आगे कोई रास्ता न था आखिर आप दिल्ली से पजाब पूज्य आत्मारामजी महाराज सा० के पास चले गये। अब आपका

विहार आचार्य श्री के साथ २ होने लगा, इससे एक लाभ भी हुआ। आपका ओज, तेजस्विता और योग्यता प्रकट में आने लगी—आचार्य प्रवर के आप विशेष कृपापात्र वन गये। पंजाव में जैन धर्म अनेक शताब्दियों बाद नया २ सा पहुंचा था—आपने शास्त्रार्थ, वादविवाद, प्रवचनों, व्याख्यानो के माध्यम से जैन धर्म के अहिंसा, अनेकान्त और अपरिग्रह के सन्देश की ज्योति घर २ में जगा दी—जगह २ इनकी योग्यता की चर्चा होने लगी—इसके साथ ही आपने गुरुदेव के सानिध्य में अंजनशलाका, प्रतिष्ठा—आदि धार्मिक प्रसंगों के विधि विधान का भी गहन अध्ययन कर लिया।

वह युग मूर्ति पूजकों के लिए संकट का युग था—मूर्ति पूजा के प्रश्न पर सब तरफ से हमले होते थे यह आपको सहन कैसे होता—आपने तर्क सहित मृदुभाषा में "गप्प दीपिका समीर" नामक एक ही पुस्तक की रचना कर विरोधियों की जवान बन्द कर दी।

आपने पूज्य गुरुदेव द्वारा लिखे गये सारे साहित्य की प्रेस कापियां तैयार करने में, अमेरीका (शिकागो) कांफ्रेस में भेजे गये वैरीस्टर श्री वीरचद राघवजी गांधी को सारे जैन धार्मिक विषयों की पूरी जानकारी देने में या यों कहो पूज्य गुरुदेव के सारे ही कार्यों में खूब सहयोग देकर महान योग्यता प्रदर्शित की। आपकी योग्यता से प्रभावित होकर पूज्य गुरुदेव ने आपको एक शिष्य प्रदान किया—एक गुजराती वन्धु डाह्या भाई को दीक्षित कर उनका नाम विवेक विजय रखा गया और वे ही आपके प्रथम शिष्य हुये।

इधर धीरे २ पूज्य आत्मारामजी म० का स्वास्थ्य गिरता जा रहा था। पंजाव के संघ वहुत चिन्तित थे कि पीछे से उन्हें कौन संभालेगा—उड़ती उड़ती यह वात आचार्य श्री के कान में भी पहुंची। उन्होंने पंजाव संघ के आगेवानों को एकत्रित किया और कहा कि चिन्ता न करो? मेरे पीछे वल्लभ तुम्हारे को संभालेगा वह हर आक्रमण से तुम्हारी रक्षा करेगा तुम आत्म और वल्लभ में कोई फर्क न समझना? दूसरी वार वे प्रिय वल्लभ की तरफ मुखातिव हुए और कहा प्रिय वल्लभ। तुम मेरे पट्टधर हो, पंजाव तुम्हारे भरोसे है, एक वात विशेष ध्यान रखना कि श्रावकों को सत्य धर्मी और ज्ञानवान बनाने के लिए सरस्वती मन्दिरों की वहुत आवश्यकता है इनकी स्थापना में अपनी पूरी शक्ति लगाना। यह गुजरानवाला की वात थी (जो आज पाकिस्तान में है) विक्रम सं० १९५३ की जेठ सुद ८ को पूज्य आत्मारामजी महाराज सा० स्वर्ग सिधार गये।

चरित्र नायक के लिए इससे वड़ा वज्रघात क्या हो सकता था। गुरुदेव के वियोग का अपार दुःख तो था ही—जो गहन जिम्मेदारी वहन कर ली थी वह भी कम न थी।

इस अवसर पर सारा पंजाव एकत्रित होना ही था—अनुकूल अवसर देख कर गुरुदेव के अंतिम सदेश को (सरस्वती मन्दिरों की स्थापना) आपने जनता जनार्दन को खूव समझाया—फिर क्या था आत्मानन्द जैन सभायें, विद्यालय, कालेज, पुस्तकालय, गुरुकुलों की स्थापना होने लगी। न केवल पंजाव मे अपितु मारवाड़—गोडवाड, मध्य-प्रदेश, गुजरात, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र जहां २ भी गुरुदेव का शिष्य परिवार पहुंच सका एक हवा फैल गई और सैकड़ों की संख्या में संस्थायें कायम हुई और आज तक अच्छे ढग से चल रही है।

आपने भी अव एक ही लक्ष्य वना लिया—कैसी भी स्थिति हो, गर्मी हो सर्दी हो, चाहे चोर डाकुओं का डर हो—खूव लम्बे विहार करना, उपदेश देना—शिक्षा प्रचार हेतु संस्थायें खुलवाना, उनको मजवूत वनाना।

जनसाधारण पर तो आपकी समन्वयवादी विचारधारा को छाप पड़ ही चुकी थी—राजा-महाराजा, नवाव, जागीरदार भी अछूते न रह

सके, जिस जगह पूज्य गुरुवर्य पहुच गये और वहा के राजामहाराजा को मालूम पडा और एकदफा आपश्री के पास आ गया—फिर तो वह पूरा भक्त हो बन गया।

नाभा, नादोद, वडौदा, लिम्बडी, पालीताना, उदयपुर-जैसलमेर व सैलाना के राजा। पालनपुर, मालेर कोटला, मागरोल, खम्भात, स चीन व राधनपुर के नवाब। वडोदा, भावनगर, लिम्बडा, रतलाम, सैलाना, वासवाडा, खम्भात, नादोद आदि के दिवान। खुडाला विजोवा, वरकाना, वीजापुर, नाणा, वेडा के ठाकुर जागीरदार एव बीकानेर की परम विदुषी महारानी आपके चारित्रवल और धर्म देशना से अत्यधिक प्रभावित थे और आपको अपना गुरु मानते थे।

राष्ट्रीय नेता श्री प० मोतीलाल नेहरू ने तो आपके उपदेश से धूम्रपान ही छोड दिया था। प० महामना मदन मोहनजी मालवीय को आपने अपने चारित्रबल और शिक्षा प्रेम से इतना प्रभावित किया कि हिदू युनिवर्सिटी बनारस मे जैन दर्शन के अध्ययन के लिए एक अलग विभाग खोला गया और उसके प्राध्यापक श्री प्रज्ञाचक्षु प० श्री सुख लालजी जैन को नियुक्त किया गया। प सुखलालजी सदृश विद्वानो को तैयार करने मे पूज्य गुरु भगवत का बहुत बडा हाथ था।

इसके अलावा भी अपनी राष्ट्रीय एव सम वय-वादी विचारधारा से आपने सरदार पटेल, मणिलाल कोठारी, श्री मगलदास पक्वासा एव मुरारजी भाई को अत्यधिक प्रभावित किया।

हि दू ही नहीं अनेक मुसलमान सरदार भी साथ ही जैनतर भी आप से प्रभावित हुये और कइयो ने जैन धर्म भी स्वीकार किया।

"अहिंसा की दृष्टि से खादी का प्रयोग करना उत्तम है" मा यता के अनुसार आपने स्वय खादी ग्रहण की और अनेको को खादी पहनने को प्रेरित किया।

मूलत आपकी मातृभाषा गुजराती थी, साथ ही सस्कृत, प्राकृत के आप प्रकाड विद्वान थे तो भी लोक भाषा के रूप मे आपने अपने प्रवचन हिन्दी मे प्रारम्भ किये—हिदी भाषा मे ग्र थ लिखना शुरू किया स्वय ही नही पर औरों को भी आपने समय के एव देश के रुख को देखते हि दी भाषा को मजबूत बनाने—हिन्दी मे लिखने व हिन्दी में भाषण करने की प्रेरणा की। ध्यान रहे यह काल आज से करीब ५० वर्ष पहले का काल था—यदि हमारी साधु सस्था ने इस भाषा सम्बन्धी तथ्य को समझ लिया होता तो आज हि दी भाषी प्रदेश मे साधुओ का आवागमन इतना कम न होता व धर्म भावना की इतनी कमजोरी दिखाई न देती।

अयोग्य दीक्षाओं के वे सदा विरोधी रहे—लुक-छिप कर दीक्षा देना उनको रुचिकर नहीं लगता था—वे कहते थे सरक्षको की अनुमति से दीक्षा दो व सघ की आज्ञा के बिना कतई दीक्षा न दो, वरना यह अयोग्य दीक्षा मात्र बन कर रह जावेगी। आपने जितनी भी दीक्षायें दी सब सरक्षको की अनुमती से एव सघ की आज्ञा के प्राप्त करने के बाद ही दी।

आप बहुत दूरदर्शी थे, आपने देश के भविष्य को समझ लिया था हरिजनो की समस्या सामने आने लगी थी—आपने उनमे भी धर्म का प्रचार किया, उनके लिए फड एकत्रित कराये—उनको उक्साया नही पर कल्याण के लिए अनेक योजनायें बनाई—आप से हरिजन इतने प्रभावित हुए कि कइयों ने अच्छी तपस्या की। आत्मान द जैन गुरु कुल के मेहतर ने भी एक बार अट्ठाई की।

जहा भी पूज्य गुरुदेव का पदार्पण हो गया वहा का कुसम्प दुम दबा कर भाग गया चाहे वह नया हो या २५-५० वर्ष पुराना ही क्यो न हो ? यह आपकी समन्वयवादी विचारधारा की जबरदस्त विजय थी—आप जहा भी गये पुराने झगडे मिट गये पर ऐसी कोई मिसाल नही जहा आपके जाने से कोई नया विवाद खडा हुआ हो।

आपने साधु मुनिराजों में सौहार्द्र बढ़े—अनुशासन बढ़े इसके लिए तो प्रयास किया ही, श्रावकों को ऊंचा उठाने में भी अपने कर्तव्य को निभाने में न चुके। मुनि सम्मेलन, पोरवाड सम्मेलन, विद्यार्थी सम्मेलन जैन श्वेताम्बर कांफ्रेंस आदि में आपश्री का प्रमुखतम योगदान रहा। एक कला आप में बहुत जबरदस्त थी, आदमी की योग्यता को पहिचानने की। निस्पृह कार्यकर्ता उनकी नजर में चढ़ जाता था। ऐसे ही एक कार्यकर्ताओं में जयपुर के मशहूर सेठ श्री गुलाबचन्दजी ढढ्ढा थे। वास्तव में जयपुर को आज जो अखिल भारतीय नाम प्राप्त हुआ है, उसमें श्री ढढ्ढाजी ही प्रमुख कडी है। ढढ्ढाजी की सौम्यता, संजीदगी, सादगी और सज्जनता से वे अत्यधिक प्रभावित हो गये थे—कई जगह के विवाद तो ढढ्ढाजी को ही उन्होंने सौंप दिये थे, और जहाँ ढढ्ढाजी पंच तरीके नियुक्त हुए कि झगड़ा खड़ा नही रह सकता था। लोग तो उन्हें वल्लभ विजयजी का श्रावक मुन्शी कहते थे।

इन सारी योग्यताओं, योग साधनाओं से यह आवश्यक था कि उन्हें नेतृत्व पद प्रदान किया जावे। कई संघों ने आचार्य पदवी के लिए विनती की पर वे विनम्र सेवक की तरह सदैव नाही करते रहे। परन्तु अन्त में वयोवृद्ध प्रर्वतक मुनि श्री कांती विजयजी म० एवं वृद्ध मुनि श्री सम्पत विजयजी म० एवं शांतमूर्ति हंस विजयजी महाराज के विशेष दवाव एवं सारे भारत के संघों के आगेवानों की विनती पर जैन शासन का मौजूदा समय का सर्वोत्कष्ट पद "आचार्य पद" से वि० सं० १९८१ मंगसर सुदी ५ को लाहोर में बड़े समारोह पूर्वक विभूषित होना ही पड़ा। तब से आप विजय वल्लभ सूरीश्वरजी कहलाये और श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वरजी के पट्टधर घोषित हुये। गच्छ के भेदों से वे सदैव दूर रहे। किसी भी गच्छ के महान् आचार्यों की जयन्तियों में जाने में उन्हें कभी संकोच नही हुआ।

आप आचार व्यवहार के पालन कराने में भी बहुत सख्त थे—चारित्र पालन में ढिलाई आपको कतई बरदाश्त न थी। बीकानेर में एक झगड़ा था प्रभुजी की सवारी सताईस मौहलों में निकाली नहीं जा सकती थी—वहां की महारानी आप से अत्यधिक प्रभावित हुई। धर्म का मर्म महारानी को समझाया गया—सवारी सब मौहलों से ठाठ से निकली। महारानी ने गुरुदेव के उपदेश से ५०० जीवों को अभयदान दिलवाया तथा बीकानेर महाराज ने इस यादगार में अपनी शिववाड़ी के बगीचे का नाम वल्लभ गार्डन रखा।

जहां पर नये पूजा करने वाले श्रावक बने वहां पर मन्दिर नये बनवाये व प्राचीन मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया।

पाकिस्तान के निर्माण के वक्त पूज्य गुरु भगवंत गुजरानवाला में बिराजते थे। उनको वहां से सुरक्षित निकालने के लिए बम्बई से हवाई जहाज की व्यवस्था की गई पर गुरुदेव की आत्मा अत्यधिक बलवान थी, उन्होंने पर्युषण के बीच जाने से साफ नाही कर दिया। मार्ग के अनेक झंझावतों व विपत्तियों के बावजूद वहां रहे। सब श्रावक व श्राविकों, समस्त साधु साध्वियों को लेकर पंजाव केसरी के पद को सार्थक करते हुए किंचित मात्र भी क्षति उठाये वगैर हिन्दुस्थान की भूमि में प्रवेश किया। यह उनके चारित्रबल का जीता जागता प्रमाण ही था।

पूर्व भव के कर्म के उदय किसी को छोड़ते नहीं, वृद्धावस्था में आंखों को ज्योति चली गई। तो भी उनके कार्य की गति में कोई फर्क नहीं पड़ा—और देव योग से ७–८ वर्ष बाद नेत्रों में ज्योति फिर आ गई यह एक चमत्कार ही था। आप के दैनिक कार्यक्रम में इस अवस्था व इस स्थिति में भी कोई फर्क न पड़ा। प्रातः ४ बजे से जप तप, ध्यान का कार्यक्रम शुरू होता—व्याख्यान करके—पत्रों के उत्तर लिखाते—प्रतिक्रमण संथारा आदि करते—

सरस्वती मन्दिरों की सूची

पूज्य आचार्य भगवत द्वारा अपने गुरुदेव के अंतिम शब्दो को हृदयस्थ कर लिया गया और अपने जीवन काल मे निम्न सरस्वती मंदिरो का निर्माण कराया, जिनमें से अधिकाश आज भी समाज की शिक्षण क्षेत्र मे अभूतपूर्व सेवा कर रहे हैं।

पजाब

१ श्री आत्मानन्द जैन गुरुकुल—गुजरानवाला
२ ,, ,, ,, विद्यालय ,,
३ ,, ,, ,, कन्याशाला ,,
४ ,, ,, ,, बालमण्डल ,,
५ श्री बुद्धि विजय जैन पुस्तकालय ,,
६ श्री आत्मानन्द जैन महासभा ,,
७ श्री ,, ,, मिडिल स्कूल, होशियारपुर
८ ,, ,, ,, हाईस्कूल, लुधियाना
९ ,, ,, ,, ,, मालेरकोटला
१० ,, ,, ,, कालेज ,,
११ ,, ,, ,, हाईस्कूल अम्बाला
१२ ,, ,, ,, कन्या पाठशाला अम्बाला
१३ ,, ,, ,, लाइब्रेरी ,,
१४ ,, ,, ,, कालेज ,,
१५. ,, ,, ,, सभा ,,
१६ ,, ,, ,, वाचनालय ,,
१७ ,, विजयानन्द जैन ,, जडियाला गुरु
१८ ,, आत्मानन्द जैन प्राइमरी स्कूल ,,
१९. ,, ,, ,, लाइब्रेरी अमृतसर

यू० पी०

२० श्री आत्मानन्द जैन पुस्तक प्रचारक मडल आगरा

राजस्थान

श्री आत्मानन्द जैन विद्यालय, सादडी
२२ श्री आत्मानन्द जैन पाठशाला, बीजापुर
२३ श्री आत्म वल्लभ जैन ,, खुडाला
२४ श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय, वरकाना
२५. श्री पार्श्वनाथ जैन उम्मेद कालेज, फालना
२६ श्री श्राविका उद्योगशाला, बीकानेर
२७ श्री जैन कालेज ,,
२८, ,,शान्ति जैन मिडिल स्कूल ब्यावर

गुजरात

२९ श्री आत्मानन्द जैन वनिता आश्रम, सूरत
३० श्री ,, ,, गुरुकुल, झगडीया
३१ श्री महावीर जैन विद्यालय, वडोदा
३२ श्री ,, ,, ,, अहमदाबाद
३३ श्री आत्म वल्लभ जैन केलवणी फड, पाल्नपुर
३४ श्री आत्म वल्लभ जैन हाईस्कूल, बगवाडा
३५ श्री चिमनलाल नगीनदास विद्याविहार, अहमदाबाद
३६ श्री ,, ,, कन्या गुरुकुल ,,
३७ श्री हेमचन्द जैन ज्ञान मंदिर, पाटण
३८ श्री आत्मानन्द जैन लाइब्रेरी, जुनागढ
३९ ,, ,, ,, वेरावल
४० ,, ,, ,, कन्यापाठशाला ,,
४१ श्री आत्मानन्द जैन औषधालय, वेरावल
४२ श्री आत्मानन्द जैन सभा, भावनगर

महाराष्ट्र

४३ श्री आत्मानन्द जैन लाइब्रेरी, पूनासिटी
४४ ,, महावीर जैन विद्यालय ,,
४५ ,, ,, ,, ,, बम्बई

इनके अलावा इनसे प्रेरणा पाकर अनेक जगह आत्म वल्लभ के नाम से अनेक सस्थायें कायम हुई।

शत्रुंजय से भद्रेश्वर तक

ले० हीराचन्द वैद, संयोजक

दो शब्द

राजस्थान की राजधानी जयपुर नगर में गत वर्षों में यादगारी चातुर्मास सम्पन्न हुए। सं० २०२३ से पूर्व जयपुर नगर से कोई भी संघ बाहर यात्रार्थ नहीं गया था। हां, यहां आने वाले बाहर के संघों का वर्ष में एक व अधिक बार भी भक्ति का लाभ स्थानीय संघ को मिलता था। सं. २०२३ का चातुर्मास यहां मेवाड़ केसरी, राजस्थान दिवाकर मुनि श्री विशाल विजयजी म० ठाणा २ का सम्पन्न हुआ। आपके जयपुर चातुर्मास की मुख्य प्रेरणा भी भीलवाड़ा से राणकपुर गए हुए वकील श्री राजमलजी बोरदीया के पैदल संघ में मिली पूज्य गुरु भगवंत की प्रेरणा व उपदेश से चातुर्मास के बाद ही मंगसर वुदी १ को करीब ३०० भाई-बहिनों के साथ पांच संघ भक्तिकर्ताओं के सानिध्य में करीब १७०० मील का १७ दिन का यात्रा प्रवास निकला, यद्यपि यह पहला ही अनुभव था। पर जो आनन्द इस यात्रा का जमा एव पश्चिम के तीर्थों की यात्रा का जो सुखद प्रसंग बना उसने उसी वक्त पूर्व के तीर्थों की यात्रा की भी प्रेरणा दे दी।

सौभाग्य से २०२४ का चातुर्मास भी इन्हीं मुनिवर का यहां सम्पन्न हुआ—भावना तो थी ही, गुरुदेव ने प्रेरणा जो भरी तो मौसम एवं राजनीतिक आदि को अनेक विषम परिस्थितियों में पहले से भी अधिक ४०० भाई-बहिनों का सघ पूर्व के सारे तीर्थों (अजीमगंज तक) की यात्रा के लिए पोस सुदी १ सं० २०२४ को रवाना हुआ—इसका नेतृत्व भी पांच सघ भक्तिकर्ता कर रहे थे पर इनमें २ नये थे। इस यात्रा प्रवास ने व्यवस्थापकों यात्रियों व संघ भक्तिकर्ताओं के हौसले और भी बढ़ा दिये। अनेक विपरीत परिस्थितियां स्थल पर पहुंचने के एक दो रोज पूर्व स्वतः ही समाप्त हो गई। करीब ३ हज़ार मील की यात्रा कर यह संघ भी २७ दिन के यात्रा प्रवास के बाद सकुशल वापस आ गया।

सं० २०२५ में प्रमुख प्रवचनकार मुनि श्री भद्रगुप्त विजयजी महाराज ठाणा ४ का चातुर्मास सम्पन्न हुआ—सब यह सोच रहे थे, दूर २ की यात्रा तो कर आये पर राजस्थान के तीर्थों की यात्रा तो अभी की ही नहीं। पूज्य गुरुवर्य की प्रेरणा होना था फिर नये पुराने मिल कर पांच संघ भक्तिकर्ता तैयार हो गये। आसोज बद १ सं० २०२५ को बसों में पहले से भी कुछ अधिक यात्रियों के साथ जैसलमेर, नाकोड़ा, कापरड़ा, बीकानेर, जोधपुर, मेड़ता आदि तीर्थों का सघ यात्रा को निकला और करीब ११ रोज के यात्रा प्रवास में करीब १४०० मील की यात्रा कर यह संघ भी सकुशल अधिष्ठायकजी की कृपा से वापस आ गया।

सं० २०२६ का चातुर्मास पन्यास प्रवर, तपोमूर्ति ज्ञाननिष्ट श्री भानु विजयजी महाराज स. का १० ठाणों सहित था। तीन २ यात्राओं का रंग लग चुका था। पर्युषण के बाद ही चारों ओर से "अब की बार किधर की ओर" आवाज गूंज उठी। संघ लेकर जाना महापुण्य के प्रसंग से जीवन में आता है पर सब यात्रियों की भक्ति और वह भी इस तरह कि उनकी भावनायें धर्म में और भी परिपक्व हो—सुव्यवस्था—समय पर भोजन की व्यवस्था आराम का प्रबन्ध और उस सबके पीछे जयपुर में

छोडे हुए अपने घर बार, दुकानदारी परिवारीजन आदि का विचार। पर जिनेश्वर भगवत की कृपा अधिष्ठायकजी की महरबानी–गुरुवर्यों का आशीर्वचन–यात्रियो का सौहार्द सब मिल कर मगल के प्रतीक बन जाते हैं।

इस वर्ष एक अनोखा प्रसग यहा अनायास ही उपस्थित हो गया–भगवान महावीर की (कायोत्सर्ग सम्प्रतिकालीन) ६३ इंची की भव्य प्रतिमा साथ हीं स० १२२६ की ११ अन्य विशाल प्रतिमायें व अम्बिकाजी की ऐतिहासिक प्रतिमा जयपुर सघ को उपलब्ध हुई। उसके लिए जयपुर के सबसे प्राचीन वि० स० १७८४ के सुमतिनाथ जिनप्रसाद में ऊपर तीसरी मजील पर भव्य देंरासर बनाने की योजना बनी। इसका प्रतिष्ठा महोत्सव भी मगसर बद ४ स० २०२६ का था। अतः इस भव्य प्रसग के कारण इस वर्ष यात्रा का कार्यक्रम स्थगित रखा गया।

समय जाते देर नहीं लगती—भविक लोग तो सोच हीं रहे थे कि पर्युषण पूर्ण हो और कोई यात्रा प्रवास का कार्यक्रम बने। इस वर्ष स० २०२७ में यहा पन्यासप्रवर विनय विजयजी म० एव १७वें वर्षी तप के आराधक तपस्वी मुनि गुण विजयजी आदि ५ मुनिराजों का चातुर्मास हुआ—यात्रियो की भावना देख कर उन्होंने भी प्रेरणा की। फिर क्या था? आसोज बुद १ स० २०२७ को कच्छ की ओर यात्रा करने का निश्चय हो गया और इस बार तो लोगों का यात्रार्थ उत्साह देख कर भक्तिकर्ता भी ५ के बजाय सात बन गये। दूसरी ओर इस वर्ष बारिश इन क्षेत्रों मे बहुत अधिक हुई हैं, अत माग टूट गये हैं, रास्ते रुक गये हैं आदि के सदेश उधर से आने लगे। बडी दुविधा जनक स्थिति बनी। यह रास्ता भी लम्बा था—समय भी कम था—प्रोग्राम आगे बढाने में ओलीजी की आराधना मार्ग में होनी—और भी कई परेशानिया थी—पर ५०० भाई-बहिनो की सुरक्षा का दायित्व लेकर चलना भी कम जोखम भरा कार्य नही था। दूसरे ये रास्ते और मुकाम कोई जानते भी नहीं थे। भादवा सुद १२ को तो इतने प्रतिकूल समाचार मिले कि यह सघ निर्धारित समय पर नही जाकर १० रोज बाद जायेगा यह निर्णय हो गया। निर्णय तो हो गया, पर अधिष्ठायक को यह मजूर कहा था, रात भर ऊहापोह चलती रही, सुबह १० बजे पूज्य गुरु भगवत के पास दो भाई आये, उन्होंने काफी स्फूर्ति दी और कहा कि शुभ कार्य में कसौटिया तो आती हैं। पर बहादुर उनसे डरतें नही, शुभ भावना से उनका सामना करकें सफलता प्राप्त करतें हैं। इस अमृत भरी वाणी नें चमत्कार किया, सब एकत्रित हुये—समाचार भी कुछ अनुकूल मिलने लगें। आखिर यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि पूर्व निर्धारित समय पर हीं संघ प्रस्थान करेगा। अब जाने में केवल २ रोज बाकी थे। सुद १४ को टिकिट वितरित कर दिये गये—सारी व्यवस्था सब यात्रियो कों समझा दी गई। इस यात्रा प्रवास मे ७ बडी बसें, १ छोटी बस व तीन मोटरें थी। इस तरह ११ वाहनों के साथ १६ तारीख यानी आसोज वद १ कों सायकाल भगवत के दर्शन कर, अधिष्ठायक को स्मरण कर एव गुरु भगवत का आशीर्वचन व वासक्षेप लेकर जुलूम के रूप मे सब हीं यात्री भाई-बहिन रामलीला ग्राउन्ड पर पहुचे जहा सब गाडिया पहले से ही यात्रियों के सब सामान से लदी हुई खडी थी। इस रोंज इन बसों के प्रस्थान के लिये कुछ अथक राजकीय नियमो की बाधा उपस्थित हुई थी पर भाई कन्हैयालालजी जैन के सौजन्य से, राज० के यातायात मत्री श्री रामप्रसादजी लढ्ढा, राज० के स्वायत शासन मत्री श्री भीखाभाई एव यातायात के अधिकारी श्री शिवरामजी जैन के प्रभाव पूण सहयोग के कारण यह बाधा दूर हो गई और स्वायत शासन मत्री श्री भीखाभाई तो रामलीला ग्राउन्ड भी आये और काफी देर ठहर कर यात्रियों को शुभ कामनायें भी प्रेषित की। इसमे हमारे लोकप्रिय जनसेवी

मत्रियों के लिए यात्रियों के दिल में जगह बनना स्वभाविक ही था। यह संघ करीब २ हजार मील की यात्रा कर निर्धारित समय से २ रोज बाद जयपुर पहुंच सका।

इन चारों यात्रा संघों के भक्तिकर्त्ता निम्न सज्जन थे

१. श्री वृद्धसिंहजी हीराचन्द वैद—चारों संघ में भक्तिकर्ता

२. श्री जतनमलजी, पतनमलजी, सरदारमलजी लुनावत ,,

३. श्री बाबूलालजी तरसेमकुमारजी पंजाबी— तीन संघों में भक्तिकर्ता

४. श्री कपिलभाई केशवलालजी शाह ,,

५. श्री शिखरचन्दजी ज्ञानचंदजी पालावत ,,

६. श्री आसानन्दजी लक्ष्मीचंदजी भंसाली ,,

७. श्री प्रेमचंदजी नोरतमलजी ढढ्ढा— इस संघ के भक्तिकर्ता

इसके अलावा स्व० श्री इन्द्रमलजी देसराजजी गत शिखरजी के संघ में भक्तिकर्ता थे।

इन चारों ही संघों के संयोजक का भार मुझ पर डाला गया। मैं बड़े संकोच में था पर जैसे २ संघ भक्तिकर्ताओं और यात्री बन्धुओं का महान सहयोग मिलता रहा मेरा साहस बढ़ता गया। और वास्तव में उसी कारण इन चारों संघों में सारे भारत में ३०० से ५०० यात्रियों को साथ लेकर करीब ८ हजार मील का साथ ही ७१ दिन का यात्रा प्रवास सफलता पूर्वक सम्पन्न कर हम सकुशल जयपुर आ गये।

इन चारों ही यात्रा प्रवासों में श्री जतनमलजी लुनावत के नेतत्व में सारे ही लुनावत परिवार का जो भोजन व्यवस्था में अपूर्व सहयोग प्राप्त हुआ वह तो कोई भी यात्री कभी भूल ही नही सकता।

वैसे सब ही भक्तिकर्ताओं का अटूट सहयोग रहा—तीर्थों के प्रबन्धकों का, विराजित मुनिवरों, व्यवस्थापकों व यात्रियों का सहयोग मिला उस पर भी मानव स्वभाववश कमी कही भूल अविनय हुई हो तो संयोजक के नाते सब ही सम्बन्धित महानुभावों से मैं क्षमाप्रार्थी हूं।

इस पुस्तक के प्रकाशन के मुख्य दो कारण ध्यान में रहे हैं। एक तो यह कि हम राजस्थान व उत्तर भारत वालों को इन क्षेत्रों की यात्रा के लिए प्रेरणादायी बने। दूसरे बाहर से भी कई पत्रों द्वारा इस यात्रा विवरण की मांगें आ रही हैं, उनको भी लाभ मिल सके। आशा है पूर्व की तीन यात्रा विवरणों के प्रकाशन की तरह यह भी प्रेरणादायी बनेगा।

इन संघों के यशस्वी प्रेरक—

मेवाड़ केसरी, राजस्थान दिवाकर

पू० विशाल विजयजी म० का बम्बई से संदेश

जयपुर वालों को यात्रा का आनन्द आ गया है—वे उसका स्वाद कैसे भूल सकते हैं। जयपुर वाले भाग्यशाली हैं जो उनको तीर्थ यात्रा का महान् अवसर इतना जल्दी २ मिल रहा है। सबको हमारा हार्दिक धर्मलाभ।

हमारा चौथा यात्रा प्रवास

राजस्थान से कच्छ की ओर

बहुत अल्प समय में चौथे यात्रा प्रवास की तैयारी हुई, पर तीन बार के अनुभव से इसमे विशेष दिक्कत नहीं हुई। निश्चित कार्यक्रमानुसार कुल ११ वाहनो मे करीब ४७५ भाई-बहिनो का यह सघ जयपुर के रामलीला ग्राउड से १६ सितबर को रात्रि को अपने प्रथम मुकाम बामनवाडजी के लिये रवाना हुआ। करीब २ घन्टे तक यात्रियों के साथ उनके परिवार के लोगों का खासा मेला लगा रहा—राजस्थान के स्वायत्त शासन मत्री श्री भीखाभाई भी काफी देर वहा मौजूद रहे—यात्रियों के उत्साह और सघ की व्यवस्था मे वे काफी प्रभावित हुये।

जयपुर से अजमेर, ब्यावर एव सिरोही होते हुये दिनाक १७ को प्रात बामनवाडजी तीर्थ पर पहुचे। हमारी पूर्व सूचना पर वहा सारी व्यवस्था की हुई थी। यहा सब यात्रियों ने पूजा सेवा की नाश्ता व भोजन किया। यहा पर आचार्य विजय जिनेन्द्र सूरीश्वर जी म० सा० विराजमान थे, सघ के सन्मुख प्रवचन करते हुये आपने तीर्थ यात्रा के महत्व पर प्रकाश डाला। यहा की पेढी को सिरोही कार्यालय से भी सूचना मिल गई थी—पेढी के कार्यकर्त्ताओं का सहयोग अच्छा रहा। यहा से रवाना होकर पिन्डवाडा गये। वहा मन्दिरजी के दर्शन किये व विराजित मुनिराजों को वदन किया। यहा सघ के आगेवान श्री लालचन्द व श्री हजारीमलजी आदि ने रात को यहा ठहरने का बहुत आग्रह किया पर समयाभाव मे यह सभव नहीं था। यहा से रवाना होकर रात को ६ बजे देलवाडा पहुचे। पेढी के मैनेजर श्री बसन्तीलालजी श्रीमाल (जो पहले पालीताना पेढी पर मैनेजर थे) का सौजन्य पूर्ण व्यवहार अनुमोदनीय था।

दिनाक १८ को श्री देलवाडा तीर्थ मे उत्साह पूर्वक पूजा सेवा का लाभ लिया गया—नाश्ता भोजन भी यही हुआ। सायकाय माऊन्ट आबू जाकर नक्की झील व अन्य दर्शनीय स्थलों को सब यात्रियों ने देखा। यहा अचलगढ़ से श्री पोकरणाजी व मेहसाना से श्री चिनुभाई आदि अग्रिम व्यवस्था के लिए आये थे। रात्रि को श्री मदिरजी में भक्ति का विशेष आयोजन रखा गया—रात्रि विश्राम यहीं हुआ।

दिनाक १९ को प्रात अचलगढ के लिए बसें रवाना हुई। वहा पर पेढी की ओर से वहा के मैनेजर श्री भगवतीलालजी पोकरणा ने सघ का स्वागत किया और बाजे गाजे से प्रवेश कराया। पूजा सेवा के लिए सुन्दर व्यवस्था थी। चाय नाश्ते की यहीं व्यवस्था की गई। यहा से वापस देलवाडा आये—और भोजन यही किया गया। दोपहर में यहा से रवाना होकर रात्रि को मेहसाना पहुंचे-मार्ग में राजस्थान और गुजरात की सीमा चोकिया थीं—यहा पर अकारण काफी समय लगा दिया गया। स्वतत्र भारत में प्रांतीयता के नाम पर यात्रियों को इतना कष्ट हो सकता है इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। यहा दोनों स्थानों पर ६-७ घण्टे रुकना पड़ा, इससे मेहसाना प्रात ४ बजे पहुंच सके। मेहसाना के सघ के आगेवान सारी रात सघ की अगवानी के लिए

इन्तजार करते रहे—मार्ग की देरी से उन सबको अत्यधिक कष्ट हुआ।

मेहसाना में कर्मचन्द की वाड़ी में संघ के लिए व्यवस्था की गई थी। स्थान बहुत ही विस्तृत, सुन्दर व शहर के बीच था। संघ के आगेवानों की भक्ति मे सारे ही यात्री अत्यधिक प्रभावित हुये। दिनांक २० को नाश्ता, भोजन व सायं का नाश्ता मेहसाना संघ की ओर से दिया गया था। प्रातः सारा यात्री संघ बाजे-गाजे से जुलूस के रूप में रवाना हुआ व शहर के मन्दिरों के दर्शन करता हुआ—उपाश्रय पहुंचा—मार्ग में भक्ति-भजनों का खूब शानदार रंग जमा।

यहां पूज्य भद्रगुप्त विजयजी महाराज सा० का चातुर्मास था। पूज्य गुरुदेव का चातुर्मास जयपुर हो ही चुका था—आप श्री के धाराप्रवाह व्याख्यान से सब ही अत्यधिक प्रभावित थे। पुराना स्नेह जागृत होना स्वभाविक ही था। संयोजक व संघ मंत्री ने जयपुर में आगामी चातुर्मास के लिए जोरदार विनती की—पूज्य महाराज सा. ने विनती को ध्यान में रखने की भावना जाहिर की। मध्यान्ह में फिर व्याख्यान का आयोजन था। तीर्थ-यात्रा के कर्तव्य पर पूज्य महाराज सा० ने सुन्दर प्रकाश डाला—हाल ही में गुजरात के सूरत-भरूंच आदि स्थानों पर आई बाढ़ों के सम्बन्ध में महाराज सा. ने सहायता करने में ध्यान आकर्षित किया। व्याख्यान में ही इस कार्य हेतु एक अच्छी राशि एकत्रित की गई। रात्रि को यहाँ के प्रमुख श्रेयश्कर मण्डल मे सघ भक्तिकर्ताओं का स्वागत किया गया व बड़े मन्दिरजी में रात्रि को भजनों का प्रोग्राम रखा गया जहां सारा शहर उमड़ पड़ा। रात्रि विश्राम यहीं कर दिनांक २१ को प्रातः तारगा के लिए रवाना हुए।

तारंगा स्टेशन स्थित धर्मशाला में चाय नाश्ते का प्रबन्ध किया गया—वहां से सब यात्रीगण पहाड़ पर स्थित तारंगा तीर्थ के लिए रवाना हुए। महाराज कुमारपाल द्वारा बनाये गये इस भव्य मन्दिर में अजितनाथ भगवान के दर्शन करते ही पहाड़ पर चढ़ने की यात्रियों की सारी थकान मिट गई, यहां पूजा सेवा का अपूर्व आनन्द प्राप्त किया। वहां से वापस स्टेशन स्थित धर्मशाला आए जहां भोजन तैयार था—यहां सब ने भोजन किया—और वालम तीर्थ के लिए रवाना हुए। रात्रि करीब ६ बजे वालम पहुंचे। संघ के आगेवानों ने सारी व्यवस्था कर रखी थी। भगवान नेमीनाथ की अति प्राचीन प्रतिमा के दर्शन कर सब यात्री अत्यधिक प्रभावित हुये। रात्रि को यहीं ठहरने का अत्यधिक आग्रह किया गया—भक्ति प्रशंसनीय थी। यहां से रवाना होकर वापस मेहसाना होते हुये पानसर तीर्थ काफी रात बाद पहुंच सके। वहां विश्राम किया।

दिनांक २२ को पानसर में अति भव्य एवं आकर्षक जिन मन्दिर में पूजा सेवा का लाभ प्राप्त किया—यहां पर बहुत बड़ी धर्मशाला व भोजन शाला है। यहां भोजनशाला द्वारा ही भोजन तैयार कराया गया। भोजन करने के बाद यहां से सेरीसा तीर्थ के लिये रवाना हुये। बारिश के कारण रास्ता खराब हो गया था—फिर भी वहां दर्शनों का लाभ लिया गया। वहा से वापस मेहसाना होते हुये आगे बढना था। मेहसाना नगर के निकट पुडरीक नगर में एक भव्य मन्दिर मय धर्मशाला के बन रहा है यह पूज्य आचार्य देव कैलाश सागरजी म० सा० के उपदेश से करीब २०–२२ लाख की लागत से बन रहा है—उस निर्माण कार्य को देखने का मेहसाना संघ का अति आग्रह था। अतः यहां रुक कर सब कार्य देखा—यहां भी महसाना संघ की ओर से ठण्डे दूध की व्यवस्था की गई थी। यहां से चाणस्मा जाना था—मार्ग में धनोज गांव आता है वहां आगेवान महसाना में आ चुके थे—उनके अत्यधिक आग्रह होने से धनोज का कार्यक्रम भी रख लिया था—पुडरीक नगर में ही धनोज और चाणस्मा के काफी भाई आ गये थे। धनोज में

करीब ५०० भाई बहिन २ घण्टे तक सघ अगवानी लिये खडे थे। मार्ग में अनेक दर्शनीय स्थल आ जाने से देरी होना स्वाभाविक था—धनोज के भव्य मन्दिर के दर्शन कर व वहा पर भगवान की की गई अङ्गरचना से सब यात्री खुश हो गये। वहा के सघ की ओर से दुध की व्यवस्था की गई थी। चाणस्मा दिन मे ही पहुचना जरूरी था। इससे यहा अधिक नहीं ठहर सके और चाणस्मा के लिये रवाना हो गये। चाणस्मा के भाई माग में बराबर स्कूटर व जीप गाडियो में हमारे लिये घूमते रहे—उनकी भक्ति देख कर हृदय गदगद हो गया। दिन बहुत कम बाकी रहने से यहा के सघ की ओर से साधर्मी भक्ति का जो कार्यक्रम रखा गया था पहले उसे कार्यान्वित किया गया। यहा भी हजारों की सख्या मे भाई बहिन सार्मये के लिये एकत्रित थे। जीमने के बाद बाजार मे से शानदार जलूस निकाला गया, यहा के सघ की ओर से सघ भक्तिकर्त्ताओं का बहुत मान किया गया—श्री भटेवा पार्श्वनाथ के मदिरजी मे सारा सघ आया, दर्शन कर अति हर्षित हुआ। मदिरजी के समीप ही उपाश्रय मे आचार्य विजय दक्ष सूरीश्वरजी म० सा० विराजते थे। जयपुर मे विराजित जयवर्द्धन पार्श्वनाथ भगवान की अजनशलाका आपश्री के हाथों ही सम्पन्न हुई थी। आपश्री का सारगर्भित प्रवचन हुआ—तीर्थ-यात्रा के महत्व पर खूब प्रभावपूर्ण ढग से आपने प्रकाश डाला। यहा फिर स्थानीय सघ की ओर से स्वागत सत्कार किया गया। रात्रि को यहा ठहरने का अत्यधिक आग्रह हुआ पर माफी चाही गई। यहा से रवाना होकर कम्बोई तीर्थ पहुचे। माग कुछ अच्छा नही था—पर छोटे से गाव मे मनमोहन पार्श्वनाथ का यह तीर्थ और उसमें काच और चिनाम का सुदर आकर्षक काय अनोखा था। यहा दर्शन कर रात्रि विश्राम हेतु शखेश्वरजी के लिए रवाना हुए। रात को शखेश्वर में विश्राम किया।

दिनाक २३ को सुबह श्री शखेश्वर महा तीर्थ में पूजा सेवा का अपूर्व लाभ प्राप्त किया। यहा पूजा भी पढाई गई व भगवान की आगी भी सघ की ओर से कराई गई। भोजन भी यहीं हुआ—थोडी देर बाद बारिश का रग अच्छा जमा। शखेश्वर मे काफी बडी २ धर्मशालायें हैं। भोजन-शाला भी नई बनी है, आयम्बिल शाला भी है। सायकाल पेटी की ओर से सघ भक्तिकर्ताओं का स्वागत किया गया। रात्रि को मदिरजी मे भक्ति का शानदार प्रोग्राम जमा—रात्रि विश्राम यही हुआ। दिनाक २४ को प्रात जल्दी ही यहा से रवाना होकर राधनपुर पहुचे। राधनपुर पुरानी नबाबी शहर है। यहा २४ मन्दिर हैं, जुलूस के रूप में सब यात्रियों ने दर्शन किये और यहा से सायलपुर के लिए रवाना हो गये। आज का खाना प्रात जल्दी ही शखेश्वर मे तैयार करा लिया गया था। अत सायलपुर से तीन भव्य मदिरों के दर्शन कर वहीं खाने की व्यवस्था की गई—राधनपुर से फोन से यहा सूचना दे दी गई थी—इससे पानी आदि की समुचित व्यवस्था यहा हो गई थी—यहा की पेढी का अच्छा सहयोग रहा। यहा से करीब दिन के ३ बजे रवाना हुए—आदिसर के रन मे होकर लाकडिया, भचाऊ होते हुए गाधीधाम पहुचे—कच्छ में प्रवेश हो चुका था। इस वर्ष यहा इतनी जोर-दार बारिश हुई—जितनी पिछले ७-८ वर्षों में कभी नही हुई। इससे सब तरफ पानी भरा हुआ था, एव कई जगह सडकें भी खराब हो गई थी—देर अधिक होने से गाधीधाम लौटते वक्त ठहरने का प्रोग्राम बना कर आगे बढा गया व रात्रि को भद्रेश्वर पहुचे। जगल के बीच बिजली की जगमगाती रोशनी देख कर सब आश्चर्यचकित हो गए—स्वप्न में कल्पना भी नहीं की जा सके ऐसी जगह सब पहुच चुके थे। भद्रेश्वर सब के दिल में बस गया, कितना विशाल प्रागण—भव्य मदिर—बडी २ धर्मशालायें, भोजनशाला क्या ये मानो राजसी व्यवस्था थी—रात्रि को विश्राम किया गया।

दिनाक २५ को भद्रेश्वर के देवविमान तुल्य जिनालय मे सब यात्रियों ने पूजा भक्ति का अपूर्व

लाभ लिया। मह भव्य जिनालय भगवान महावीर के काल का है—वहां भगवान महावीर के भवों के चित्र संजोये हैं, वे दर्शनीय है। दिन भर यात्रीगण इन चित्रों को देखते रहे व विवरण पढ़ते रहे। मंदिर के बाहर भोजनशाला के बाजू में बहुत सुन्दर दादाबाड़ी हाल ही में बनी है—दोपहर में यहां पूजा भी पढ़ाई गई। भोजन की व्यवस्था भी सुन्दर रही। यहां से समुद्रतट समीप ही है। धर्मशाला की छतों से समुद्रतट दिखाई देता है। यह क्षेत्र हम सब के लिये बिल्कुल नया था। अत: कच्छ में घूमने के लिये यहां से पूरी जानकारी ली गई तथा भोजनशाला से शाह उमरसी भाई को भी मार्ग-दर्शन हेतु साथ लिया गया। रात्रि को यहां का इतिहास सब यात्रिगणों को बतलाया गया व भक्ति का प्रोग्राम भी आकर्षक रहा। रात्रि विश्राम यही किया गया।

दिनांक २६ को प्रातः यहां से रवाना हो कर मुन्द्रा गये यहां बड़े विशाल शिखर वद्ध ३ देरासर है। वहां दर्शन कर एवं नाश्ता कर माण्डवी के लिए रवाना हुए—माण्डवी से करीब २ मील पूर्व श्री मेघजी सोजपाल जैन आश्रम है। इसके प्रागण मे बहुत सुन्दर मंदिर भी बना हुआ है। इस आश्रम में करीब २०० निराश्रित भाई-बहिन रहते हैं—अधिकाश इनमें वृद्ध व बीमार है। इस आश्रम को देख कर सब ही यात्री द्रवीभूत हो गये—यहा की व्यवस्था से सब ही प्रभावित हुए—सम्भवतः अपने ढग का यह एक ही आश्रम है। आश्रमवासियो के लिए अलग २ रूम है—गौशाला है जहां से शुद्ध दूध मिलता है—पूरी डाक्टरी व्यवस्था है। धार्मिक आराधन भी यहा खूब होता है—कुछ आश्रमवासियों ने १५ से ४० तक उपवास, भी हाल ही में किये थे। २५१) की ४ तो स्थाई मितीया, लिखाई गई। करीव १ हजार रुपया यात्रियो द्वारा इस आश्रम की सहायतार्थ दिये गये—व इतनी ही राशि आश्रम वासियों को भी भेंट की गई। यहां लोगों को सेवा भक्ति की काफी प्रेरणा मिली—यहां से रवाना हो कर माण्डवी गये—वहां चार मंदिर है—वहां दर्शन किये व कच्छ की छोटी पंचतीर्थी के लिए रवाना हुए। करीब १५ मील जाने पर सड़क के खराब होने से वापस लौटना पड़ा—सब ही यात्रियों के दिल में पचतीर्थी की यात्रा नहीं होने से काफी क्षोभ था पर अत्यधिक मजबूरी से ही यह कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। वापस माण्डवी आकर दादाबाड़ी ठहरे, यह बड़ा रमणीक स्थान है—मंदिर व दादाबाड़ी साथ २ है यहीं भोजन किया और भोजन कर बची हुई काफी भोजन सामग्री यहां की गरीब बस्ती में वितरित कर दी। यहां से रवाना हो कर कच्छ की राजधानी भुज के लिए रवाना हुए—नगर के बाहर दादाबाड़ी व साथ ही धर्मशाला है। वहां पर ठहरे और रात्रि विश्राम किया—

दिनांक २७ को सुबह दादाबाड़ी स्थित मंदिर में पूजा सेवा की तथा शहर के मंदिरों के दर्शन करने गये—धर्मशाला में महाराज साहब भी विराजते थे। वहा वन्दन कर वापस दादाबाड़ी आये—खाना खाया और अंजार होते हुए गाधी धाम के लिए रवाना हो गये। पहले सीधे कडला गये और पोर्ट देखा—वापस गाधीधाम आए। वहां पार्श्वनाथ भगवान के मदिर में दर्शन किए—गांधीधाम को देख कर जामनगर के लिए रवाना हुये। मार्ग में मालिया रोड पर बारिश के कारण सड़क बहुत खराब हो चुकी थी—ड्राइवरों ने बड़ी होशियारी से पानी भरे क्षेत्रों में से गाड़ियां निकाली—पर आगे टूटी सड़क पर एक ट्रक फसा हुआ था—और रात को उसका निकलना मुश्किल था—अतः मजबूर हो कर रात को सड़क पर ही रुकना पड़ा। सुबह तक ट्रक के दोनों बाजु १०० से भी अधिक ट्रक–बसें व तेल के टेन्कर इकट्ठे हो चुके थे। बड़ी मुश्किल से ट्रक को निकाला और एक बाजु के ट्रक निकले जब हम को रास्ता मिल

सका इससे जामनगर पहुचने का कायक्रम सब अस्त-व्यस्त सा हो गया—मोरवी, राजकोट होते हुये दिनाक २८ को मध्याह्न जामनगर पहुचे—वहा सघ की ओर से वाडी मे ठहरने की व्यवस्था की गई थी। वहा पहुच कर भोजन बनाया तथा इसी बीच सब यात्रीगण यहा विराजित आचाय भगवत विजय रामचद्र सूरीश्वरजी म० सा० के दर्शनो के लिए पहुच गये व मध्याह्न के व्याख्यान के श्रवण का लाभ लिया। व्याख्यान के बाद समीप ही के मदिरजी मे पूजा का भव्य आयोजन था वहा भी भक्ति का आनन्द लिया गया—वहा से वापस आकर सब ने खाना खाया व फिर शहर के मदिरो एव दिग्वीजय प्लाट के मदिर के दशनो के लिए सब लोग निकल गये—जामनगर आधा शत्रुजय कहलाता है—नगर के बीचो बीच गगन चुम्बी शिखरो से युत मदिर वास्तव मे इस नगर की शोभा को चार चाद लगा रहे हैं। रात्रि को भक्ति का प्रोग्राम पाठशाला मे अच्छा जमा।

दिनाक २९ को सारा सघ भजन मण्डली सहित मदिरो के दशन करता हुआ—पूज्य आचाय भगवत के व्याख्यान मे पहुचा। पूज्य गुरुदेव ने हमारी विनती पर हिन्दी मे प्रवचन किया। तीथ यात्रा से जीवन मे क्या परिवर्तन होना चाहिये तीथ-यात्रा का हमारा लक्ष्य क्या है आदि विषयो पर पूज्य आचार्य देव ने बहुत प्रभावपूर्ण ढग मे प्रकाश डाला।

जयपुर के सघ मन्त्री एव इस सघ के सयोजक ने पूज्य गुरु भगवत को सारे सघ की ओर से जयपुर पधारने की जोरदार विनती की—पूज्य आचार्य भगवत २००८ वि० मे जयपुर पधार चुके थे। पूज्य गुरुदेव ने दिल में अत्यधिक भावना होते हुये भी शारीरिक अस्वस्थता से इतनी दूर आने मे असमर्थता प्रकट की—फिर भी जैसी क्षेत्र स्पृशना कह कर अपनी पूरी भावना जाहिर की। व्याख्यान श्रवण के बाद सब लोग वाडी वापस आये और भोजन किया तथा अन्य दशनीय स्थान देखने के लिए रवाना हो गये। यहा का शमसान देखने लायक है—सब धर्मों के उपदेश के सुन्दर चित्र सजोये गये हैं। ससार चक्र का वृत चित्र यह भी देखने योग है। मध्याह्न बाद जामनगर से रवाना हुए—आज काफी लम्बा मार्ग तै करना था—सुबह तक भिलडीया पहुचना था—जो करीब ३०० मील दूर था। राजकोट हो कर सुरेन्द्रनगर पहुचे—यहा के मुनिसुव्रत भगवान के बडे मदिर के सब यात्रियो ने दशन किये, भव्य व विशाल मदिर है। यहा पर पन्यास मुक्ति विजयजी महाराज सा० चातुर्मासार्थ विराजते थे—उनके दर्शन किये। यहा से वीरम गाव का रास्ता बारिश की वजह से सब टूट फूट गया था—आवागमन भी बहुत सीमित हो गया था—बडी गाडियो को तो जाने की इजाजत ही नही दी जाती थी—फिर भी अधिकारियो से मिल कर बडी मुश्किल से अपनी जिम्मेदारी पर इजाजन प्राप्त कर ली गई व काफी बडी जोखम उठा कर गाडियो को आगे बढाया गया—रात को इस जिम्मेदारी को उठाने मे एक समस्या प्रमुख थी कि गुजरात राज्य को किसी भी हालत मे तीस तारीख तक छोड देना था—अन्यथा टैक्स की बहुत बडी राशि सर पडती थी। रात भर चल कर सुबह होने से कुछ पूर्व भीलडीयाजी पहुचे—डीसा से श्री कन्हैयालाल भाई व साचोर से भी दो भाई यहा आये थे। भीलडीयाजी में बहुत बडी धमशाला है—भोजन-शाला है। नया मदिर बहुत सुन्दर बना है। पर प्रतिष्ठा सम्पन्न नही हो रही है—वह होनी ही चाहिए—३० तारीख को यहा पूजा सेवा कर भोजन किया गया तथा यहा से रवाना हो कर नये डीसा गये—मदिरजी के दशन किये व वहा विराजित मुनि श्री दुर्लभ सागरजी म० सा० का प्रवचन सुना—उनके साथ के एक १२ वर्ष के बालमुनि जिनको दीक्षा लिये हुये ७-८ माह ही

हुये थे, बड़ा प्रभावशाली प्रवचन हुये, सुन्दर व स्पष्ट भाषा के इन बालमुनि के प्रवचन का सब यात्रियों पर बड़ा असर हुआ। यहां के संघ की ओर से सब यात्रियों के लिये शर्बत का इन्तजाम किया गया था। यहां से रवाना हो कर नये ड़ीसा आये वहां पर श्री कन्हैयालाल भाई (जिनकी जयपुर में गद्दी है) ने संघ की खूब भक्ति की। मंदिरों के दर्शन किये एवं यहां विराजित ९६ वर्ष की आयु के आचार्य विजय भद्रसूरी महाराज—आचार्य विजय ओंकार सूरी महाराज एवं आचार्य सुबोध सागर सूरीश्वरजी महाराज के दर्शन किये व प्रवचन सुने—यहां भी शर्बत की व्यवस्था संघ द्वारा की गई थी। यहां से सांचोर के लिए रवाना हो गये—गुजरात की सीमा पार कर राजस्थान में प्रवेश किया। साचोर संघ के कार्यकर्ता सड़क पर झुंड के झुंड एकत्रित थे। सांचोर में तीन जगह ठहरने की बहुत सुन्दर व्यवस्था की गई थी। गांव वालों की भक्ति की सीमा नहीं थी, रात को विश्राम किया।

दिनांक १ अक्टूबर को महावीर स्वामीजी के प्राचीन मदिर में पूजा सेवा कर सब आयम्बिल खाते में नाश्ते के लिए गये—यहां के संघ ने नाश्ता व भोजन अपनी ओर से देने का निश्चित किया था, नाश्ता कर सब लोग जुलूस के साथ रवाना हुए, गांव के बाजारों में जो स्वागत सत्कार हुआ वह तो अब तक की सारी सीमाओं को लांघ चुका था—सारा संघ गुलाल के रंग से रंग दिया गया जगह-जगह मालायें और स्वागत—बराबर २ घंटे जलूस चल कर गांव के बाहर पहुंचा जहां महान् तपस्वी मुनि श्री जिनप्रभ विजयजी म० सा० भी पधार चुके थे—इन महाराज श्री का सं० २०१९ में जयपुर में यादगारी चातुर्मास सम्पन्न हुआ था। यहां के वकील व अग्रेसरी कार्यकर्ता श्री लक्ष्मीचंदजी द्वारा भाव भीना स्वागत किया गया—बाद में जयपुर पधारने व चातुर्मास करने के लिए जोरदार विनती की गई। महाराज सा० ने तप व त्याग ही जीवन का मुख्य ध्येय बतला कर सचोट उपदेश दिया। उपस्थित सब ही भाई-बहिनों ने यात्रा के यादगार स्वरूप व्रत नियम ग्रहण किया—संघ ने रात को यहां ठहरने व शाम का भोजन भी यहीं करने का अत्यधिक आग्रह किया। सुबह का भोजन संघ की ओर से बड़ी भक्ति पूर्वक दिया गया—सांचोर की अटूट भक्ति और प्रेम से सब ही गद्‌गद् हो गये। यहां कुछ सामाजिक विवाद पड़ा हुआ है, उसका ज्ञात होने पर यहां के संघ वालों को एकता के लिए अत्यधिक प्रेरित किया गया। यहां से नाकोड़ा के लिये प्रस्थान करना था—पर मार्ग में नाकोड़ा का सीधा रास्ता कच्चा होने से बाड़मेर हो कर नाकोड़ा जाने का तै किया गया। बाड़मेर में काफी ऊंचाई पर स्थित मंदिरों के दर्शन किये—यहां का बाजार बहुत बड़ा है—लोगों ने यहां काफी खातीरदारी की यहां से रवाना हो कर रात्रि को नाकोड़ा पहुचे—व वहीं विश्राम किया।

दिनांक २ को सुबह पूजा सेवा की, तीर्थ की भक्ति की, नाकोडा भैरुवजी की भी पूजा सेवा की। फिर भोजन किया। यहां पर आचार्य विजय हिमाचल सूरीश्वरजी म० सा० विराजमान थे। इससे पहले के तीसरे संघ में भी आप यहां विराजते थे व पहले संघ में आप के उदयपुर में दर्शनों का लाभ मिला था। आप काफी अस्वस्थ है। पर हमारे विशेष आग्रह के कारण ही आपने इस संघ का मालमहोत्सव अपनी निश्रा में सम्पन्न करने की स्वीकृति दी। नाकोडा तीथ के विशाल चौक में आचार्य श्री की निश्रा में मालमहोत्सव प्रारम्भ हुआ। पहले पूज्य आचार्य भगवंत ने सुन्दर प्रवचन किया बाद में संघपतियों की माला की बोलियां हुई—यात्रीगणों ने काफी उत्साह दिखाया—तीर्थ को भी अच्छी आय हुई। बाद में सयोजक ने सारे यात्रा प्रवास का सिंहावलोकन किया—मार्ग में हुई असुविधाओं के लिए यात्रियों से क्षमायाचना की, सब यात्रियों के सहयोगी वर्ताव के कारण ही अन

जाने प्रदेश की यह यात्रा इतनी सफलता से सम्पन्न हुई यह जाहिर किया। बाद मे सघ में पधारे सब यात्रियो की सघ पूजा का कार्यक्रम रखा गया। बाल वृद्ध सब ही यात्रिगणों को तिलक कर एक-एक रुपया सघ भक्तिकर्ताओं की ओर से भेंट किया गया। काफी हर्षोल्लास से यह कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। श्री जैन नवयुवक मण्डल द्वारा भी स्वागत किया गया, रात्रि को यहीं विश्राम किया गया।

दिनाक ३ को प्रात जल्दी ही भोजन बनवाया गया व साथ लिया गया। तथा यहा से रवाना हो कर बालोतरा पहुचे—यहा मन्दिरजी के दर्शन किये व नाश्ता किया, यहा से जोधपुर होते हुए करीब ११ बजे कापरडा पहुचे, यहा पूजा सेवा का लाभ प्राप्त किया—तथा नई धर्मशाला मे सब यात्रियों को भोजन कराया गया—यह राजस्थान का सबसे ऊचे शिखर वाला तीर्थ है। भोजन के उपरात यहा सारे सघ का फोटोग्राफ भी लिया गया। यहा से रवाना हो कर व्यावर होते हुए, दिनाक ४ को सुबह बहुत तडके जयपुर पहुचे।

इस सुखद यात्रा प्रवास के निर्विघ्न समापन से सब ही यात्री आनन्दित थे। उस टाईम पर भी काफी लोग जयपुर के जौहरी बाजार मे एकत्रित हो गये थे।

इस यात्रा प्रवास मे फोटोग्राफर की साथ में व्यवस्था थी, फस्ट एड की व्यवस्था थी। लाउड-स्पीकर की व्यवस्था थी, साथ ही जयपुर के प्रसिद्ध श्री जैन नवयुवक मण्डल की भजन मण्डली भी साथ थी। इसके अध्यक्ष तो स्वय एक सघ भक्ति-कर्ता थे, जगह २ इस मण्डली की ओर से सगीत द्वारा भक्ति का जो जमघट जमा, उसको वहाँ के लोग भी कभी भूलेंगे नही। भोजन वगैरह की सुन्दर व्यवस्था व वैतनिक कार्यकर्ताओ के सहयोग से भी यह यात्रा सब को सुखद बन सकी।

सब ही तीर्थ स्थलो पर बोलियो द्वारा—सघ भक्तिकर्ताओ द्वारा भेंट की गई रकमो द्वारा एव यात्रियों द्वारा जमा कराई गई रकमों द्वारा देवद्रव्य व साधारण की राशि में अभिवृद्धी की गई—

बिल्कुल नये क्षेत्र होने पर भी यह यात्रा सब के लिए यादगारी बन गई, साथ ही प्रेरणादायी भी बन गई। सबका अत्यधिक आग्रह होने से इन तीर्थों का सक्षिप्त इतिहास मय यात्रा विवरण के हिन्दी भाषा में प्रकाशित कर रहे हैं। इस आशा के साथ कि अधिक से अधिक भाई-बहिनो की इन क्षेत्रो की यात्रा की भावना बने।

आचार्यदेव श्री विजय हिमाचल सूरिश्वरजी
नाकोडा

"सातो सघ भक्तिकर्ताओं का प्रोग्राम सराहनीय रहा। ऐसा ही प्रति वर्ष शुभ लाभ प्राप्त करते रहे। आप सर्व धर्म ध्यान व्रत नियम धर्म क्रिया मे खुब आगे बढे यही शुभेच्छा।"

वामनवाडजी

मूलनायक—श्री महावीर स्वामी

सिरोही रोड स्टेशन से ५ मील दूर यह तीर्थ स्थित है—यहां भगवान महावीर के जीवन काल की प्रतिमा हैं—मन्दिरजी का जिर्णोद्धार कार्य चालू है—बावन जिनालय है एवं मन्दिरजी के बाहर प्रांगण में दोनों ओर भगवान महावीर के भव के सुन्दर दर्शनीय चित्र है। यह मन्दिर पहाड़ी की तलहटी में है—हाल ही में ऊपर पहाड़ी पर सम्मेत शिखर तीर्थ की रचना हो रही है। कार्य बहुत सुन्दर हो रहा है।

यहां पर बहुत बड़ी धर्मशाला है व भोजन शाला भी है यहां का प्रबन्ध श्री कल्याणजी परमानन्दजी की पेढी सिरोही के पास है।

महान् योगीराज विजय शान्ति सूरीश्वरजी (आबू वाले) यहां विराजे थे। उस वक्त यह तीर्थ अच्छी प्रसिद्धि में आया।

आबू तीर्थ

मूलनायक—श्री ऋषभ देव भगवान

दुनियां के बताये गये आठ आश्चर्यों में से एक यह आबू का देलवाड़ा जैन मन्दिर है—आबू रोड से करीब १८ मील पहाड़ पर ऊपर जाना पड़ता है—सड़क टेढ़ी-मेढ़ी है पर पक्की डामर रोड है। देलवाड़ा मन्दिर माऊन्ट आबू से भी करीब १-१॥ मील दूर है।

बाहर से देखने पर देलवाड़ा के मन्दिर साधारण से दिखाई देते हैं, पर मन्दिर में प्रवेश करते ही तो निर्माताओं के प्रति श्रद्धा से नतमस्तक हो जाना पड़ता है। विमल शाह—वस्तुपाल, तेजपाल की यह कलाकृतियां युग २ तक उनके जीवित स्मारक बने रहेंगे—राज्य के ऊंचे पदों पर आसिन हो कर इतनी जिम्मेवारियां निभा कर इस तरह की कलाकृतियों के वे निर्माता बने यह दैविक कार्य ही कहा जावेगा।

विमल वसही—अणहिलपुर के राजा भीमदेव प्रथम के सेनापति विमल मंत्री ने सं० १०८८ में १५ करोड़ ५३ लाख लगा कर १४० फुट लम्बा ९० फुट चौड़ा बावन जिनालय बनवाया—और उसमें ५१ अगूंल की आदिश्वर भगवान की प्रतिमा चार आचार्यो द्वारा प्रतिष्ठा कराई। मन्दिरजी के काम आने वाली जमीन की कीमत ४ करोड़ ५३ लाख ६० हजार सोना मोहर जमीन पर बिछा कर ब्राह्मणों से खरीदी।

सं० १२०७ में इन्हीं के वंशज पृथ्वीपाल ने (कुमारपाल राजा के मंत्री) जिर्णोद्धार करा कर हस्तीशाला का निर्माण कराया। सं० १३३८ में अलाउद्दीन खिलजी ने तोड़-फोड़ की उसका जिर्णोद्धार १३७८ में हुआ।

इस मन्दिर की कोतरनी अच्छे २ शिल्पियों को दांतों तले उगंली डालने को मजबूर करती है।

यहां का जिर्णोद्धार सेठ आनन्दजी कल्याणजी की पेढी ने कुछ वर्षो पूर्व लाखों रुपया लगा कर सम्पन्न कराया है। मौजूदा मूलनायकजी पीछे से विराजमान किये हुए हैं—प्रारम्भ के मूलनायकजी कोने के देरी में विराजित है। यह शत्रुंजयावतार कहा जाता है।

लुण वसही मन्दिर—देलवाड़ा का यह दूसरा मन्दिर मन्त्रीश्वर वस्तुपाल के भाई तेजपाल के पुत्र लुणसिह के नाम पर सं० १२८७ में बनाया गया इसमें भी १२ करोड़ ५३ लाख मुद्रा खर्च हुई। मूलनायक श्री नेमीनाथ भगवान की प्रतिमा कसौटी के पाषाण की हैं। रंग मंडप के बिल्कुल बाहर देवराणी-जेठाणी के गोखले हैं जिनके निर्माण में १८ लाख मुद्रा खर्च हुई थी, इसे गिरनारावतार भी कहते हैं।

पीतलहर मन्दिर—सुलतान मोहम्मद बेगड़ा के मंत्री सेठ भीमाशाह थे। सं० १४८९ में १०८ मण पीतल की श्री आदिश्वर भगवान की ८ फीट ऊची ५॥ फीट चौड़ी परिकर सहित की मूर्ति

मन्दिर मे इन्होने पधराई। इस मदिर के बाहर दाहिने हाथ पर मणिभद्रजी की देरी है।

चोमुखजी का मन्दिर—इसे कारीगरो का मन्दिर भी कहते हैं। ऐसी कथा प्रचलित है कि स० १५१५ मे मजदूर कारीगरो ने यह तीन मजीला मदिर बनवाया—यहां तीनो मजील मे चौमुखजी है।

महावीर स्वामी का मन्दिर—विमल वसही के बाहर ही पेढी की ओर से आते वक्त यह महावीर स्वामी का छोटा सा मन्दिर है।

इन मन्दिरों की व्यवस्था श्री कल्याणजी परमानन्दजी पेढी सिरोही से करती है। पास ही तीन धर्मशालायें है जो काफी बडी है। ग्रीष्म ऋतु मे यहा जगह मिलना बडा मुश्किल होता है।

अचलगढ

मूनायक—श्री ऋषभ देव भगवान

देलवाडा से ५ मील दूर पहाडी स्थान पर किले पर यह तीर्थ स्थित है। वि० स० १५०६ में मेवाड के राणाकुम्भाजी द्वारा यह बनवाया गया था।

नीचे तलहटी मे शान्तिनाथ भगवान का मदिर है, पहाड पर चढने के लिए सिढीया बनी हुई है। डोलीया भी मिल जाती है। सिढीया चढने पर पहले कुंथनाथ भगवान का देरासर आता है पीछे धर्मशाला आती है। यहा की व्यवस्था रोहीडा सघ के पास है। इस पेढी का नाम अचलसी अमरसी की पेढी पडता है। उसके ऊपर चढ कर बडा मन्दिर आता है।

चौमूखजी की विशाल स्वर्ण मिश्रीत धातु प्रतिमायें जिनका प्रत्येक का वजन १२० मन है स० १५६६ में माडवगढ सघ के सहसाशाह ने कुम्भारीया से यहा लाकर पधराई थी। धातु की ऐसी विशाल १४ प्रतिमायें हैं जिनका वजन १४४४ मन बतलाया जाता है।

जलवायु सुन्दर है, रहने की व्यवस्था ठीक है भोजन शाला भी है। इन वर्षों में इस तीर्थ की व्यवस्था में काफी सुधार हुआ है।

मेहसाना

मूलनायक—श्री मनोरजन पार्श्वनाथ

यहा १२ जिन मन्दिर है। बाजार के बीच सबसे बडा मन्दिर श्री मनोरजन पार्श्वनाथ का है इसी मन्दिर मे श्री सुमतिनाथ भगवान मूलनायक तरीके विराजमान है। दो मजीला यह विस्तृत दर्शनीय मन्दिर है।

दो उपाश्रय, दो जैन धर्मशाला, भोजनशाला व वर्धमान तप आयम्बिल शाला की व्यवस्था है।

यहा एक जैन विद्यार्थी भवन भी है, यहा भी एक मन्दिर है।

यहा श्री मद् यशोविजय जैन सस्कृत पाठशाला है जो धार्मिक शिक्षण देने वाली भारत भर में अजोड सस्था है।

मेहसाना नगर के बाहर नेशनल हाईवे पर पुंडरीक नगर की नई बस्ती मे भव्य मन्दिर का निर्माण कार्य चालू है, इसमे समग्र भारत में सबसे बडी श्री सीमन्धर स्वामी भगवान की भव्य प्रतिमा विराजमान की जावेगी।

यहा जैन श्वेताम्बर ४०० घरो की वस्ती हैं।

तारंगा तीर्थ

मूलनायक—श्री अजितनाथ भगवान

तारगा हिल स्टेशन के लिए मेहसाना से रेल गाडी जाती है। स्टेशन पर धर्मशाला है—थोडी दूर पर तलहटी है वहा से पहाड पर चढना पडता है—रास्ता कुछ टेढा है—ऊपर तक सडक बनाने का प्रयास चालू है। आशा है इसी वर्ष मे वह बना दी जावेगी।

तारगा का भव्य मन्दिर १२१६ वि० से १२३० के बीच गुजरात नरेश महाराज कुमारपाल द्वारा

बनवाया गया था। सम्वत १२८५ के शिला लेख में तारंगा तीर्थ का विवरण आता है। उत्तर गुजरात की उत्कृष्ट कलाकृति का द्योतक यह मन्दिर है।

विशाल चौक के बीच १४२ फीट ऊंचा—१५० फीट लम्बा और १०० फीट चौड़ा—१६ खम्भों पर आधारित यह देरासर है। इन १६ खम्भों को ऊपर जाकर मिला दिया गया है। विशेषता यह है कि उस वक्त से यह विशाल शिखर डूंगरपुर के जंगल में मिलने वाली "किकंर" लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़ों पर स्थित है—आठ सौ वर्ष बाद भी ये लकड़ी के टुकड़ ज्यों के त्यों देखे जा सकते है। तीर्थपति अजितनाथ भगवान का विशाल भव्य बिम्ब मन को मोह लेता है। ईडर के गोविन्द सिंघ्वी को अम्बिका देवी ने स्वप्न में बताया और वि० सं० १४७९ में सोम सुन्दर सूरी महाराज के हाथों प्रतिष्ठा हो कर यह तीर्थ फिर प्रकट में आया।

हाल ही में सेठ आनन्दजी कल्याणजी की पेढी ने लाखों रुपया खर्च कर इस तीर्थ का जिर्णोद्धार कराया है। यहां नन्दीश्वर द्वीप का मन्दिर दर्शनीय है। पहाड़ पर ही भोजनशाला धर्मशाला आदि भी है।

वालम तीर्थ

मूलनायक—श्री नेमीनाथ भगवान

मेहसाना से तारगा के मार्ग में वीस नगर के करीब यह तीर्थ स्थल—गांव के बीच है—भगवान नेमीनाथ की प्रतिमा लाखों वर्ष पुरानी बतलाई जाती है मन्दिर अति भव्य है। बाजु में ही धर्म-शाला, भोजनशाला आयम्बिलशाला व पेढी है। मन्दिर का जिर्णोद्धार कुछ वर्ष पूर्व ही हुआ है। मन्दिर दैदिप्यमान हो रहा है। संघ की भक्ति अनोखी है।

पानसर तीर्थ

मूलनायक—महावीर स्वामी

मेहसाना से अहमदाबाद सड़क पर थोड़ा भीतर जाकर यह तीर्थ आता है। बहुत बड़े कम्पाउन्ड में बनी धर्मशाला में देव विमान तुल्य भगवान महावीर का भव्य मन्दिर बना हुआ है। ये प्रतिमा खुदाई कार्य करते वक्त भूगर्भ से निकली थी। वि० सं० १९७४ में प्रतिष्ठा हुई है। मन्दिरजी के पीछे भव्य जल मन्दिर बना हुआ है—अहमदा-बाद से प्रति रविवार को सैकडों की संख्या में भाई बहिन आते हैं। धर्मशाला भोजनशाला व पेढी है व्यवस्था बहुत सुन्दर है स्थान रमणीय है—पास ही गांव है जहां भी एक देरासर है।

शेरीसा तीर्थ

मूलनायक—श्री पार्श्वनाथ प्रभु

१३वीं शताब्दि में यह स्थान सोनपुर के नाम से प्रसिद्ध था इसकी शेरीया (गलीया) बहुत ही सकड़ी थी इसी से इसका नाम धीरे २ शेरीसा पड़ा। सं० १३८९ में आचार्य देवन्द्रसूरी महाराज के हाथों इस तीर्थ की स्थापना हुई यहां सम्प्रति कालिन अनेक बडी २ प्रतिमायें हैं—अहमदाबाद के पास होने से यहां भी हमेशा वहां से यात्री आते रहते है, भोजनशाला व धर्मशाला है।

चाणस्मा तीर्थ

मूलनायक—श्री भटेश्वर पार्श्वनाथ

मेहसाना से शंखेश्वर जाते वक्त मार्ग में चाणस्मा नगर आता है। यहां बाजार के बीच भटेश्वर पार्श्वनाथ भगवान का गगन चुम्बी जिनालय है। प्रतिमाजी रेत की बनी हुई है अति प्राचीन है। पाली जिले के भाटुआर गांव से आने की वजह से यह भटेश्वर पार्श्वनाथ कहलाने लगे। इस जिन प्रसाद का निर्माण वि० सं० १३३५ में हुआ है। कुछ वर्षों पूर्व महीनों तक रात्रि के वक्त

बिना बत्तियों के शिखरों के पास जगमगाती रोशनी देखी गई थी—यहा चमत्कार होता रहता है। यहा धर्मशाला, उपाश्रय, आयम्बिल शाता आदि है। सब बहुत नविन है।

कम्बोई तीर्थ

मूलनायक—श्री मनमोहन पार्श्वनाथ

मेहमाना से शंखेश्वर जाने वक्त मार्ग मे चाणस्मा आता है, वहा से थोडी ही दूर पर यह तीर्थ है—रास्ता कच्चा है पर बसें आदि जा सकती है।

इस तीर्थ की अनेक प्रतिमाओं पर शिला लेख १५०४ व १५०५ वि० का है। सम्राट अकबर प्रतिबोधक जगद्गुरु हीर विजय सूरीश्वरजी म० के पट्टालंकार श्री विजय सेनसूरीश्वरजी म० के हाथों वि० स० १६५६ में अंजनशलाका सम्पन्न हुई है।

अन्तिम जिर्णोद्धार व प्रतिष्ठा स० २००३ में श्री दर्शन विजयजी म० त्रिपुटी के हाथों सम्पन्न हुई। मन्दिर छोटे गाव मे है पर काच व चित्राम का जैसा सुंदर कार्य है, वैसा आस पास के मदिरो में कहीं नहीं है। मूलनायक भगवत की प्रतिमा बडी मनोहर है। स्थान दर्शनीय है। मन्दिरजी के बाजू में धर्मशाला भी है। गाव के लोगों में भक्ति खूब है।

शंखेश्वर तीर्थ

मूलनायक—श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ भगवान

गत चोवीसी में तीर्थंकर दामोदर स्वामी के काल में अषाढी श्रावक द्वारा अपने परम उपकारी आगामी चोवीसी के तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का विवरण जानकर इस प्रतिमा का निर्माण कराया—काल के प्रभाव से देवलोक व पाताललोक आदि में पुजित होती हुई यह प्रतिमा महाभारत काल में प्रकट में आई। श्री नेमीनाथ प्रभु के बतलाने पर जरासंघ की विद्या पर विजय पाने के लिये कृष्ण महाराज ने यहा देवी की आराधना की और भगवान के प्रकट होने से जोर से शंख ध्वनि की इसी से इस गाव का नाम शंखेश्वर और तीर्थ का नाम संखेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थ पडा। यहा का पक्षाल लेकर कृष्ण महाराज ने सैन्य पर छिडका—जरासंघ की विद्या को समाप्त किया—सैन्य को जागृत किया और विजय प्राप्त की।

इसके बाद क्रमश उतार चढाव आते रहे प्रतिमाजी को भोयरे मे रख दिया गया—फिर उदय रत्न महाराज के वक्त यह प्रतिमा ऊपर आई और यह बावन जिनालय युक्त मन्दिर बना—यह महान चमत्कारी तीर्थ गिना जाता है। यहा यात्री लोग अट्ठम का तप करते हैं। यहा पोसवद १० कार्ती सुद १५ व चैत्र सुद १५ को मेला भरता है। यहा यात्रियों को निशुल्क भत्ता दिया जाता है। बहुत बडी-बडी दो धर्मशालायें हैं। नई भोजनशाला भी बहुत बडी है। आयम्बिलशाला भी है। उपाश्रय भी है।

यहा केवल ७ जैन घर हैं। यहा के तीर्थ की व्यवस्था अहमदाबाद से होती है।

जलवायु बडी अच्छी है। मेहमाना, वीरमगाव, अहमदाबाद, पाटन, पालीताना सब नगरों से सर्वीस चालु है।

श्री भद्रेश्वर (वसई) तीर्थ

मूलनायक—श्री महावीर स्वामी

गुजरात राज्य के कच्छ विभाग में मुन्द्रा तालुका की सरहद पर श्री भद्रेश्वर गाव है। इसी स्थान पर ऐतिहासिक, परम प्रभावक, सुप्रसिद्ध और अत्यधिक प्राचीन श्री वसही जैन तीर्थ स्थित है।

इस तीर्थ का इतिहास अति प्राचीन है। विक्रम के पाच सदी पूर्व यानी चरम तीर्थंकर भगवान महावीर निर्वाण के तेरह वर्ष बाद भद्रावती नगरी के तत्कालीन महाराज श्री सिद्धसेन की

सहानुभूति से यहां के श्रावक देवचन्द्र ने इस तीर्थ का शिलारोपण किया। और इसके ३२ वर्ष बाद परम पूज्य कपिल केवली मुनि ने भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमाजी को यहां प्रतिष्ठित किया। इस प्रतिष्ठा महोत्सव के समय ही भद्रावती नगरी के महान दम्पति विजय सेठ और विजया सेठाणी का आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत प्रसिद्धि में आया और इसी पुण्य प्रसंग पर इस दम्पति ने भगवती जैन दीक्षा अंगीकार की।

काल के प्रभाव से वि० सं० १३१३-१४ और १५ में जो महान दुष्काल भारत के अनेक भागों में पड़ा उसमें अन्न, वस्त्र से जनता की अटूट सेवा करने वाले एवं "महान दानवीर" का खिताब प्राप्त करने वाले दुष्काल भंजक सेठ जगडुशा भी इसी भद्रावती नगरी के निवासी थे। उन्होने इस तीर्थ का जिर्णोद्धार कराया और जिन मन्दिर की देव विमान तुल्य सुन्दर व भव्य रचना कराई और भद्रावती नगरी के चारो ओर पक्का परकोटा बंधाया।

भारतीय जैन तीर्थो में श्री सिद्ध गिरि महा तीर्थ वगैरह शाश्वत तीर्थो के अलावा कच्छ के इस वसही जैन तीर्थ जितना प्राचीन कोई तीर्थ नही है।

लगभग २५०० वर्ष पुराने गगन चुम्बी भव्य जिन मन्दिरों को देख कर यही कल्पना होती है कि मानो कोई देव विमान ही वसुन्धरा पर रख दिया गया है। मूल मे तो जिसने भद्रेश्वर के इस तीर्थ के दर्शन नहीं किये—उसकी तीर्थ यात्रा अधूरी ही रही है।

कल्पना से परे इस तीर्थ का दृश्य है। ऊपर छत पर से समुद्र दृष्टिगोचर होता है—मौजूदा स्थिति में जंगल के बीच यह तीर्थ है—बनाने वाले तो धन्यवाद के पात्र हैं ही पर जैसी सुन्दर अनुमोदनीय व्यवस्था है वह देख कर श्रद्धा से सर झुक जाता है।

इस तीर्थ का इतिहास, बड़ा उतार चढाव का है। २५०० वर्ष के मध्य कई उद्धार हुये। पर इनमें परम शासन प्रभावक सम्राट सम्प्रतिराजा, महान दानवीर और दुष्काल भंजक सेठ जगडुशा और परम तपस्वी मेवाड़ के महाराणा द्वारा "तपा" का विरूद प्राप्त करने वाले श्री जगतचन्दसूरी म० आदि के द्वारा अब तक ९ बड़े उद्धार सम्पन्न हुये है।

अंग्रेजों के राज्य में पोलीटीकल एजेन्टों ने भी इस तीर्थ के उद्धार में खूब उदारता बरती है। सं० १९२१ से सं० १९५० तक अन्तिम नवां जीर्णोद्धार हुआ—जिसमें माण्डवी के यति खंत विजयजी, भुजपुर के यति श्री सुमति सागरजी, महाराव श्री देशलजी बावा और माण्डवी निवासी श्री सेठ मोणसी शान्तिदास पिताम्बर की विधवा पत्नी श्रीमती मीठी वहन का अडलख योगदान रहा।

वैसे यह प्रदेश भूकम्प का क्षेत्र है। अनेक बार हुए भुकम्पों में सारी भद्रावती नगरी और बंदरगाह नष्ट भष्ट हो गये, पर शासन देव की कृपा से यह तीर्थ स्थान आज तक जैसे का तैसे विद्यमान है।

भद्रावती नगरी के विनाश के बाद इस स्थान पर भद्रेश्वर गांव बसा है। अभी भी भद्रावती नगरी के खडहर कई जगह मौजूद है।

यह तीर्थ २॥ लाख वर्ग फीट के विशाल प्रागण में स्थित है। बावन जिनालय से सुशोभित यह तीर्थ वहुत ही सुन्दर है। जिनालय के प्रवेश द्वार से मूलनायक भगवान की पूरी प्रतिमा के दर्शन होते हैं। तीर्थ का पवित्र वातावरण यात्री को भक्ति भाव व आध्यात्मिक विचारणा के लिए प्रेरित करता है।

अभी मूलनायक पद पर अदभुत एवं नयन मनोहर महावीर स्वामी भगवान का जिन विम्ब विराजित है।

इनके पीछे भमती में पचीसवें जिनालय में कपिल केवली द्वारा प्रतिष्ठित श्री पारसनाथ भगवान

की परम पावनी एव ससार तारीणी मङ्गल मूर्ति विराजमान है। पार्श्वनाथ की इस प्रतिमा पर फण नहीं है अत यह केवली अवस्था की प्रतिमा है।

यहा फागण सुद ३—४—५ को मेला भरता है—यहां बहुत बडी भोजनशाला है इसमे हरेक यात्री को दो वक्त बिना मूल्य भोजन परोसा जाता है। धर्मशालायें बडी विशाल है १० हजार आदमी भी आ जावें तो ठहरने की असुविधा नहीं है।

व्यवस्था बहुत ही सुदर है—कार्यकर्ताओ का व्यवहार प्रेरणादायी है।

वैसे यह स्थान भारत के सुदूर पश्चिम मे है पर गाधी धाम से सर्वीस चालू है। बम्बई से भुज तक विमान सर्वीस है वहा से भी सर्वीस चालू है। इसके अलावा गुजरात के अनेक स्थानो से बसें यहा आती है।

गाधीधाम से करीब ३० मील दूर है। इस तरफ के यहा मङ्गलकारी—पवित्र एव दर्शनीय तीर्थ की यात्रा कर मानव जीवन का अमूल्य लाहवा लेने की हमारी विशेष आग्रह भरी विनती है।

यहा के ट्रस्ट का नाम श्री वर्धमानजी कल्याण जी ट्रस्ट है। पता भद्रेश्वर (कच्छ)

कच्छ की पंचतीर्थी

'सुथरी–कोठारा–जखौ–नलीया–तेरा

सुथरी—माण्डवी बन्दरगाह से २६ मील पर स्थित है। शिखरबद्ध भव्य देरासर है। मूलनायक घृत कल्लोल पार्श्वनाथ कहलाते हैं—ऐसी किवदती है कि मदिरजी की प्रतिष्ठा के समय इतना घृत इकट्ठा हुआ कि खूब खुले हाथ उपयोग करने पर भा कोई कमी नहीं हुई। इसलिए प्रतिष्ठा के वक्त से ही मूलनायक भगवान को घृत कल्लोल पार्श्वनाथ कहा जाने लगा। यहा २०० जैन घरों की बस्ती है—बहुत बडी चार धर्मशालायें व ६ उपाश्रय है।

कोठारा—बाजार के बीच १२ शिखरो से युक्त ७४ फीट ऊचा अलौकिक देरासर है–मूलनायक श्री शान्तिनाथ भगवान है। यहा स्फटिक की प्रतिमा व सोने के सिद्धचक्रजी भी है। इस मदिर के निर्माण कार्य में केशवजी नायक का अपूर्व योगदान है। इन्ही केशवजी नायक की ट्रक श्री शत्रुजय तीर्थ पर भी है। यहा ७५ जैन घर है। धर्मशाला है।

जखौ—एक ही विशाल कम्पाउन्ड मे शत्रुजय सदृश्य ६ मन्दिर अलग २ बने हुए हैं। शिखरबद्ध मन्दिरो की यह श्रेणि जैन इतिहास की अपूर्व थाती है। मुख्य मन्दिर का नाम रत्न ट्रक है, मूलनायक श्री महावीर भगवान है इसमे स्फटिक व सोने की मूर्तिया भी है। यहा २०० जैन घरो की बस्ती है धर्मशाला, पाठशाला, उपाश्रय आदि दर्शनीय है।

नलिया—गाव के बीच १६ शिखरों वाला विशाल व अनुपम जैन मन्दिर है—मूलनायक श्री चन्द्राप्रभु भगवान है। यह सेठ नरसीनाथा का बनाया हुआ है। जिनके बारे में शत्रुजय जाने वाले यात्री भली भाति जानते हैं। २५० जैन घर है। उपाश्रय, धर्मशाला आदि भी है।

तेरा—यहा दो जिनालय है एक काच के काम का व नौ शिखर वाला जीरावाला पार्श्वनाथ भगवान का है। दूसरा सामने ही सामलिया पार्श्वनाथ का है। यहा १०० जैन घर है, उपाश्रय, धर्मशाला भी है।

इस पच तीर्थो को देख कर पुराने जमाने की समृद्धि आखो के सामने नाचने लगती है—उन भविक आत्माओ ने अपने पैसे का कैसा सदुपयोग किया कि आज हजारों वर्ष बाद भी उनका नाम अमर है।

जामनगर

सौराष्ट्र में समुद्रतट के किनारे स्थित यह नगर अपनी स्वच्छता व भव्यता के लिए सारे गुजरात मे प्रसिद्ध है। नगर के बीचोबीच बावन जिनालयों

से युक्त अनेक मन्दिरों का समूह अनायास ही शत्रूंजय तीर्थ की याद दिला देता है। और वैसे इसे आधा शत्रूंजय कहते भी है—चांदी बाजार के बीच पाठशाला व उपाश्रय के बाजु का शान्तिनाथ भगवान का भव्य मन्दिर स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है। इसके आगे पीछे के चारों गगन चुम्बी शिखरों से युक्त मन्दिरों के समूह को किसी ऊंचे स्थान से देखा जा सके तो इस आभा को देखने का मोह यात्रियों व दर्शकों का घण्टों भी न छूटे। इनके अलावा नेमीनाथ का चोंरी वाला मन्दिर व गली में नेमीनाथ का भव्य मन्दिर व दूसरे अनेक मन्दिर दर्शनीय हैं। थोड़ी दूर पर नया बना दिग्विजय प्लाट का भव्य मन्दिर के निर्माण ने तो नगर की शोभा को चार चांद लगा दिये है। भैरु मार्ग के नाके पर यात्रियों के लिए जैन वाड़ी है।

भीलड़ियाजी

मूलनायक—श्री पार्श्वनाथ भगवान

राजस्थान से गुजरात में प्रवेश करते वक्त डीसा के आगे भीलड़ी स्टेशन है। यहां पर भीलड़िया पार्श्वनाथ का प्रसिद्ध तीर्थ है। पुराने काल में इसे भीमपल्ली कहते थे। तीर्थ काफी प्राचीन है—अभी यहा की व्यवस्था डीसा वालों के पास है—पुराने मन्दिर के जीर्ण-शीर्ण हो जाने के कारण प्रतिमाजी को एक कमरा बनवा कर उसमें विराजमान किया हुआ है। पुराने मन्दिर के स्थान पर करीब ४ लाख की लागत से नया भव्य मन्दिर भी काफी अर्सो हुआ बन चुका है—पर किन्ही कारणों से प्रतिष्ठा आदि कार्य सम्पन्न नहीं हो रहा है—यह शोभनीय नही है। प्रतिमाजी छोटी है पर अति मनोहर व प्राचीन है। धर्मशाला बहुत बड़ी है—भोजनशाला भी है—पानी वगैरह की खूब व्यवस्था है।

सांचोर (सत्यपुरी)

मूलनायक—श्री महावीर भगवान

यह नगर राजस्थान गुजरात की सीमा पर बाड़मेर से डीसा तरफ जाने पर आता है। वैसे गांव तो छोटा है पर तीर्थ बहुत प्राचीन है। गोतम गणधर द्वारा रचित जग चिन्तामणी चैत्य-वन्दन में आता है "जयउवीर सच्चउरि मंडण" इस ही से इसकी प्राचीनता सिद्ध है, यहां कुल पांच मन्दिर हैं पंच तीर्थी कहलाती है। मूल मन्दिर महावीर स्वामी भगवान का है। समय सुन्दर कवि का यही जन्म स्थान है। यहां जैन समाज के ५०० घर हैं—बहुत ही भविक लोग है—धर्मशाला उपाश्रय, आयम्बिलशाला बहुत सुन्दर बने हुए हैं।

श्री नाकोड़ा तीर्थ

मूलनायक—श्री पार्श्वनाथ भगवान

राजस्थान में बालोतरा के पश्चिम की ओर ७ मील पर यह तीर्थ स्थित है। राजस्थान के प्रमुख जैन तीर्थो में नाकोडा भी एक है। जंगल के बीच मगल रूप यह तीर्थ अपने अधिष्ठायक श्री नाकोड़ा भैरवजी के कारण भी काफी विख्यात है। मूल में यह मन्दिर ११वीं शताब्दी का है—बाद में इसका विकास वि० सं० १६६७ से १६८२ तक आचार्य देव विजय यशोदेव सूरीश्वरजी महाराज सा० की प्रेरणा से हुआ।

प्रारम्भ में पार्श्वनाथ प्रभु की यह प्रतिमा इस स्थान से करीब २४ मील दूर नाकोड़ा ग्राम में स्थित थी—वि० सं० १४४३ में मुसलिम बादशाह ने हमला किया तो श्रावकों ने यह प्रतिमा तलघर में रख दी। सं० १५०२ में विरमपुर के सेठ जिनदत्त को स्वप्न आया—उन्होने वहां विराजित आचार्य देव श्री मद् कीर्तिरत्न सूरीश्वरजी म. सा. को स्वप्न सुनाया। आचार्य म० संघ लेकर नाकोड़ा ग्राम में गये और वहां से प्रतिमाजी को बड़े ठाठ बाट से विरमपुर नगर में लाये और यहां विराजमान

यात्रियों के लिये
आवश्यक निर्देशन व सूचनायें

१ इस यात्रा का प्रति टिकिट शुल्क १०१) रु० है। इसमे मोटर खर्च, भोजन व जलपान खर्च शामिल है। ३ वर्ष से १० वर्ष तक के बच्चो का टिकिट शुल्क ५१) रु० है।

२ मार्ग के कार्यक्रम की सूची सलग्न है। आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी हो सकता है।

३ दैनिक कार्यक्रम की सूचना दी जाने के बाद भी जो यात्री इसका पालन नही करेंगे और इससे उनको कोई असुविधा होगी तो जिम्मेवारी उनकी स्वय की होगी।

४ यात्रा प्रवास मे जोखम और गहने कम से कम साथ रखना हितकर होगा।

५ यात्रा प्रवास मे कम से कम और हल्का सामान ही लेने का प्रयत्न करें। आवास की व्यवस्था निर्देशन मुजब ही करनी होगी।

६ भोजन हेतु स्वय के ही थाली, कटोरी, गिलास आदि साथ रखें। भोजन सामूहिक होगा। रात्रि भोजन वर्जित है।

७ पूजा व प्रतिक्रमण के सामान का थैला एव भोजन के बरतनो का थैला अपने अन्य सामान से अलग रखें ताकि अनावश्यक दूसरे सामान को न उतारना पडे।

८ यात्रा प्रवास में बोली आदि बोलने, चिटठा आदि भरने पर उस राशि के भुगतान का दायित्व यात्री का स्वय का होगा।

९ भोजन की व्यवस्था निम्न प्रकार होगी— प्रात —नवकारसी के बाद चाय नाश्ता। मध्यान्ह भोजन। साय—हल्का नाश्ता व फल आदि।

१० टिकिट की स्वीकृति के बाद पूरी रकम लेकर यात्री टिकिट दे दिया जावेगा। बसो में उन टिकिटो के लिए निश्चित स्थान उपलब्ध होगा। आधे टिकिट वाले बच्चो को अलग से सीट नही मिलेगी।

यात्रा सघ के भविको को सन्देश

जब हम चातुर्मास के लिये इधर आये तो हिन्दी भाषा के प्रति हमारी अनभिज्ञता से पशोपेश म पड गये थे। पर पर्वाधिराज की आराधना म जो श्रद्धा और उदात् भावना हमने देखी व जिस शान्ति से सूत्र आदि का श्रवण किया गया उससे दिल काफी उल्लसित हुआ। पर्वाराधन के बाद जयपुर नगर सें लगातार मे चौथे सघ की वह भी कच्छ की ओर, भावना सुनकर दिल मे प्रसन्नता होना स्वाभाविक था—हमने भी प्रेरणा की और प्रेरणा ने मूर्त रूप लिया—सुव्यवस्थित ढग से करीब ४५० भाई बहिनो का यह सघ सब यात्रा करता हुआ सकुशल वापस आ गया। हमारे दिल मे जयपुर सघ का तीर्थ यात्रा एव प्रभु भक्ति के प्रति निष्ठा के कारण काफी अच्छा स्थान बन गया है। ये यात्राये जीवन मे परिवर्तन लावे एव इन यात्राओ की जीवन मे सुवास बनी रहे, कार्यकर्ताओ का उत्साह बढता रहे, ऐसे आयोजन प्रति वर्ष सम्पन्न होते रहे हमारी तो यही शुभेच्छा है।

जयपुर
आसोज सुद १५

प० विनय विजय
गुण विजय

ऐसे थे मेरे वल्लभ !

—ईश्वरलाल जैन "न्यायतीर्थ"

दुबला-पतला शरीर, तप-त्याग और वैराग्य की साक्षात् मूर्ति, शान्त मुद्रा, मस्तक पर विशाल तेज, निर्मल चारित्र, उत्कृष्ट आचार और प्रगतिशील विचार, वाणी में माधुर्य, वचनों में सिद्धि, भावों में ओज, सागर की तरह गम्भीर और मन में 'सर्वजन हिताय' की प्रबल तरंगें।

वे एक युग-द्रष्टा थे, युग-निर्माता थे, समयदर्शी, समय धर्म के व्याख्याता और समाज की नाड़ी को परखने वाले महात्मा थे। उन्होंने जन-जन के मन में नवीन प्रेरणा दी, नवीन चेतना दी, नया जीवन फूंका, नवीन जागृति और स्फूर्ति उत्पन्न की। उनकी जागरूकता और कार्य दिशा ने समाज की प्रगाढ़ निद्रा को झकझोर दिया।

वे रुढ़िवादी लकीर के फकीर नही बल्कि पुराने विचारों और कार्यो को नया मोड़ देकर उचित और आवश्यक नवीन विचारों को भी साथ में अपनाने वाले सत्य के उपासक क्रांतिकारी जैनाचार्य थे, जो कहा करते थे 'जो मेरा सो सच्चा' नही, बल्कि "जो सच्चा सो मेरा"।

स्वकल्याण के साथ आत्म साधना का मुख्य लक्ष्य संजोये हुए एक जैन सन्त, देश, धर्म और समाज के उत्थान और उत्कर्ष की प्रवृत्तियो में किस प्रकार अनवरत जीवन का योग दे सकता है इस का एक उदाहरण गुरुदेव वल्लभ का जीवन है या यों कहिये कि वल्लभ के पावन जीवन मे विविध प्रवृत्तियों के संगम का विचित्र दर्शन है।

उनका जीवन सम्प्रदाय व गच्छ के भेदभाव एवं दकियानूसी संकीर्ण विचारों और अज्ञान मूलक धारणाओं से ऊपर उठ कर समय की आवाज और आवश्यकतानुसार समस्त मानव समाज एवं प्राणीमात्र के कल्याण के लिए सर्वतोमुखी विकास की प्रवृत्तियों में प्रवृत्त रहा।

जैन धर्म के मुख्य सात क्षेत्रों में से जहां पर जिस कमी का अनुभव किया वहां उसी को पुष्ट करने का जीवन भर प्रयत्न किया। ज्ञान और क्रिया, आचार और विचार दोनों की ही उत्कट कठोर साधना के परिणाम स्वरूप जगह-जगह जिन मन्दिर और चारों ओर ज्ञान की बोलती मीनारें, स्थान-स्थान पर सरस्वती मन्दिर—गुरुकुल, कालेज और विद्यालय उनकी यशोगाथाएँ गा रही हैं। अपने जीवन में विशाल कार्य कर जाने की एक साध थी, अपने नाम और प्रचार के लिए नहीं बल्कि गुरुदेव के नाम पर मिट जाने के लिए।

जिस समय जैन साधु-मुनिराजों के उपदेश प्राय: एक सीमित चारदीवारी उपाश्रय के अन्दर ही हुआ करते थे उस समय हमारे वल्लभ के प्रवचन संकुचित दायरे से निकल कर खुले-आम सार्वजनिक स्थानों पर "सवी जीव करूं शासन रसी" और मानव मात्र के कल्याण की भावना से ओत-प्रोत अमृत बरसा रहे थे। जन-जन को उन से प्रेरणा मिली, आत्मकल्याण का मार्ग मिला, उनके चरणों के संसर्ग से जीवन को सफलता मिली।

शत-शत वन्दन हो ऐसे गुरुदेव के चरणो मे !

राजस्थान मे सबसे ऊँचे शिखर वाला मन्दिर
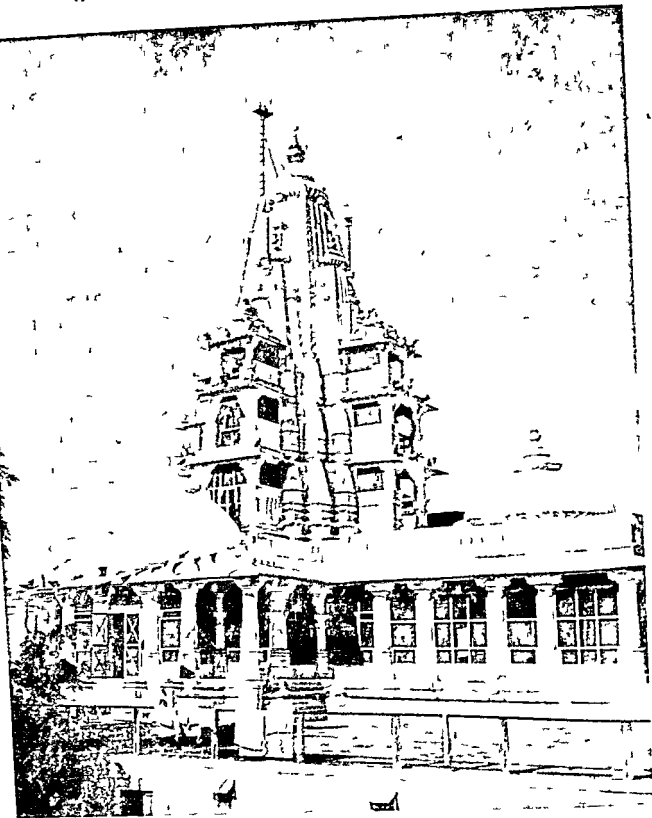
श्री कापरडा तीर्थ

हिन्दी भाषा में :–

सरल--सुबोध एवं धार्मिक साहित्य के लिए

श्री जिन कल्याण प्रकाशन

ठि० आत्मानन्द सभा भवन

घी वालो का रास्ता, जयपुर–३ (राजस्थान)

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

वार्षिक कार्य-विवरण

(भादवा बदी ऽऽ सं० २०२८ तक)

महानुभाव !

आज का यह मांगलिक अवसर हमारे लिये उत्साह और उमंग तो लेकर आता ही है साथ ही गत वर्ष मे हुई आराधनाओं का लेखा-जोखा याद कराकर अगले वर्ष के लिये और भी अधिक दृढ़ता के साथ धार्मिक उद्यम करने की प्रेरणा देता है। शासन पति चरम तीर्थंकर भगवान् महावीर स्वामी के जन्म-महोत्सव का वर्णन आज हर जगह किया जाता है और उसी प्रकार यहाँ भी यह महोत्सव धूम-धाम से मनाया जाता है। आज का यह पर्व दिवस हमारे संघ का वार्षिकोत्सव दिवस होने से दूर-दूर रहने वाले भविको को भी यहाँ पधारने की प्रेरणा देता है और इस तरह यह हमारे आपसी स्नेह-मिलन का सुन्दर प्रतीक बन जाता है। आज के इस महोत्सव मे परिवार के छोटे बड़े सब ही सदस्य उपस्थिति होकर इस संस्था के प्रति अपनी लगन और श्रद्धा प्रस्तुत करते हैं।

इस संघ के अनन्त उपकारी श्री सुमतिनाथ भगवान्, श्री जयवर्द्धन पार्श्वनाथ भगवान्, श्री जयपुर मण्डल महावीर भगवान् के प्रति विनय पूर्वक कृतज्ञता जाहिर कर साथ ही इस संघ संस्थान के अधिष्टायक महान चमत्कारी श्री मणिभद्र जी महाराज को नमस्कार कर इस संस्थान के गत वर्ष के लेखे-जोखे व कार्य विवरण को श्री संघ के सन्मुख प्रस्तुत कर रहे हैं।

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ का अपना विधान है, जिसके तहत करीब १५ वर्ष से इस संस्थान की सब ही प्रवृतियों का संचालन आप सब के द्वारा चुनी गई महासमिति करती है। मौजूदा पांचवीं महासमिति का यह दूसरा वर्ष है जिसका कार्य विवरण आपकी सेवा में पेश कर रही है-विधान के अनुसार चालू वर्ष में भी यही महासमिति कार्य करेगी और अगले वर्ष निर्वाचन के बाद आने वाली महासमिति को अपना गुरुतर भार सौंपकर यह अपना कार्यकाल पूर्ण करेगी। महासमितियों को अब तक अध्यक्ष के रूप मे स्वर्गीय श्री गुलाबचद जी सा. ढढ्ढा, स्व० श्री धनरूपमल जी भण्डारी मंजे हुये और अनुभवी नेता मिले है। अभी महासमिति को युवक साथी श्री शाह कस्तूरमल जी से नेतृत्व मिल रहा है। आपके कार्यकाल में गत वर्षों में इस संस्थान की जो प्रगति हुई है वह कार्य विवरण के माध्यम से तो प्रतिवर्ष आपके सामने रख ही दी जाती है वास्तव मे तो सारी प्रगति चश्मदीद है। महासमिति के उपाध्यक्ष श्री हीराचंद जी एम. शाह की सस्था के प्रति बढ़ती हुई रुचि, उदात्त भावना एवं निर्णय लेने की सूझ-बूझ साथ ही महासमिति के सदस्यो का सौहार्द एव सब की रचनात्मक एवं समन्वयवादी विचारधारा ही इस संस्था के निरंतर विकास का वास्तविक रहस्य है। इतना ही नहीं संघ के सब ही परिवारों का जो स्नेह इस संस्था के साथ है तथा जो सुझाव समय-समय पर इन सबसे प्राप्त होते रहते है उससे कार्यकर्ताओ को अत्यधिक प्रेरणा मिलती है और

इलाज कर उनको बिल्कुल स्वस्थ कर दिया जब ही विहार कराया गया।

इसी बीच प्यास जी की स्वय की अस्वस्थता ने भी काफी चिन्ता पैदा कर दी। पर सघ के सौभाग्य से उचित निदान की व्यवस्था होने से जल्दी ही उन्होंने स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर लिया।

बम्बई नगर मे दिसम्बर माह म अखिल भारतीय स्तर पर सदगत आचार्य विजय वल्लभ सूरीश्वरजी म० की जन्म शताब्दी का भव्य आयोजन किया गया था। जयपुर सघ की ओर से भी इस आयोजन मे भाग लेने के लिये एक बडा प्रतिनिधि मण्डल गया। प्रतिनिधि मण्डल की ओर से श्री हीराचन्द वैद ने भाव भीनी श्रद्धांजली प्रस्तुत की साथ ही इस अवसर पर इस आयोजन के माध्यम से कोई चिरस्थाई कार्य करने की चर्चा भी की जिनमे विशेषतौर से शताब्दी वर्ष के काल मे १०० ताम्र पत्र सारे देश मे स्व० आचार्य देव से सम्बन्धित प्रमुख स्थानों पर उनकी विशिष्ठ विचारधारा को खुदवा कर लगाने एव धार्मिक अध्ययन देने हेतु अध्यापक तैयार कर उनके स्तर को ऊँचा बनाने आदि के कार्यों की योजना रखी। उपस्थित समुदाय ने सुझावो पर अपनी अनुकूल टिप्पणिया की।

एक चातुर्मास पूर्ण हो जाने के बाद अगले वर्ष के चातुर्मास हेतु विनती करने हेतु एक प्रतिनिधि मण्डल महा समिति के निश्चयानुसार अहमदाबाद साध्वी जी म० सा० श्री निर्मला श्री जी एम ए, साहित्य रत्न की सेवा म पहुँचा। गत वर्षों मे साध्वी जी महाराज सा० का कोई चातुर्मास नहीं होने से बहिनो की उग्र भावना थी कि इस बार साध्वी जी म० सा० का चातुर्मास अवश्य ही होना चाहिये। महा समिति की राय भी अनुकूल थी। साध्वी जी म० सा० ने जयपुर एक दम नया प्रदेश उनके लिये है यह बतलाकर भी उग्र भावना देखकर इस सम्बन्ध मे जल्दी ही कुछ निश्चय कर सूचित करने का फरमाया। कुछ दिनो बाद साध्वी जी म० सा० की चातुर्मास हेतु स्वीकृति प्राप्त हो गई—इससे सघ में हार्दिक प्रसन्नता व्याप्त हो गई। राजस्थान मे आप श्री का विहार ही कभी नहीं हुआ था तो चातुर्मास का तो प्रश्न ही क्या था। राजस्थान मे प्रथम चातुर्मास का सौभाग्य जयपुर को ही प्राप्त हुआ। माघ मास म साध्वी जी महाराज सा० ने शिष्या परिवार सहित जयपुर की ओर विहार प्रारम्भ किया। जयपुर सघ को आशा थी कि वैसाख मास तक इधर पधार जाने पर छात्राओं के शिविर का आयोजन जयपुर मे ही होगा और इसमे जयपुर व आस पास की शिक्षित बहिनों को महाराज सा० की निश्रा मे धार्मिक अध्ययन का सुनहरा अवसर प्राप्त होगा। पर विधि को यह मजूर नहीं था—आबू के करीब पधारते वक्त साथ के एक साध्वी जी म० सा० के साथ किसी अशिक्षित आदिवासी के अज्ञानता के कारण एक दुघटना घट गई, जिससे शरीर मे काफी चोट आई। सूचना मिलने पर जयपुर से दो व्यक्ति गये और सारी स्थिति देखी। ऐसी अवस्था मे विहार करना शक्य नही था न उन महाराज सा० को वहा छोडकर आगे बढा जा सकता था। अत इलाज और विश्राम हेतु काफी समय तक वहाँ ठहरना पडा, जिससे शिविर आदि की जयपुर की योजनायें पूरी नहीं हो सकी। आबू से जयपुर तक रुग्ण साध्वी जी म० सा० के लिये विहार में उचित व्यवस्था करने पर भी कष्ट होना स्वभाविक ही था। मार्ग मे कई बाधायें भी उपस्थित हुई। रास्ते मे सघो के अगेवानो ने वही ठहर कर चातुर्मास करने की विनतिया भी कीं, पर महाराज सा० ने यही फरमाया कि हमने जयपुर वालो को चातुर्मास की स्वीकृति दी है। अत हर परिस्थिति मे हम जयपुर ही जावेंगे और आपने अपना विहार चालू रखा और आषाढ मास के प्रारम्भ मे आप जयपुर के निकट पधार गये।

आषाढ वदी ४ शनिवार को आपका शानदार

नगर प्रवेश (साम्मेला) हुआ। हाथी, घोड़े, बैंड व भजन मण्डली के साथ उपस्थित वहत् जन-समुदाय के साथ जुलूस इसी निमित्त बनाये गये अनेकों तोरण द्वारों से होता हुआ श्री आत्मानन्द सभा भवन पहुँचा—जहाँ महाराज श्री का ओजस्वी प्रवचन हुआ। मोदक आदि की प्रभावनायें भी हुई।

इसी बीच यहाँ शेष काल मे विहार करते हुये श्री विनोदचन्दजी महाराज ठाणा २—श्री जिन प्रभ विजयजी महाराज सा० की आज्ञानुवर्तिनी साध्वी जी चार एवं श्री जम्बु श्री जी महाराज (आज्ञानुवर्तिनी श्री निपुणप्रभ सुरिश्वरजी) ठाणा ४ यहां पधारे व कुछ काल तक विराजे।

साध्वीजी महाराज सा० के पधारने के बाद से ही संघ में उत्साह और उमंग व्याप्त हो गई। आपके मधुर भाषी प्रवचन निरन्तर चल ही रहे हैं। व्याख्यान में श्राद्धविधि और विक्रम चरित्र आप फरमा रहे है। आपके प्रवचनों से प्रभावित होकर संघ में विविध प्रकार की तपस्याओं की झड़ी-सी लग गई है। मोक्ष तप में ८० भाई-बहिनों ने (सात एकासन एक उपवास) तथा सामुहिक आयम्बिल तप करीब २०० भाई-बहिनों ने एवं समवसरण तप में करीब ५० भाई-बहिनो ने भाग लिया। जयपुर में पहली बार तीन-तीन पचरगी तप एक साथ हुये और उसका प्रभावी वरघोडा निकला। इन तपस्याओ मे एकासने व पारणे मे भी भविकों ने लाभ लिया। सोलह क्षीर समुद्र का तप भी हुआ। इनके साथ ही लम्बी तपस्यायें भी आपकी प्रेरणा से प्रारम्भ हुई।

श्री चम्पालालजी कोचर, बीकानेर निवासी की धर्म पत्नी श्रीमती गुलाब बाई ने, श्री बुद्धसिह जी वैद की धर्मपत्नी श्रीमती भंवरबाई (संघ मंत्री हीराचन्द वैद के मातुश्री) ने तथा श्री इन्द्रचन्दजी चोरड़िया ने स्वयं ने मास क्षमण तप की आराधना की। इसके अलावा भी इस वर्ष जयपुर में ६ मास क्षमण और हुये—अठ्ठाइयों और तेलों की तो गिनती ही क्या? यह चातुर्मास काल तपस्या की दृष्टि से जयपुर में हमेशा याद किया जाने वाला रहेगा। इतनी तपस्याये एक साथ जयपुर में होने से आस-पास के क्षेत्रों में जयपुर का गौरव बहुत बढ़ गया है।

इसके साथ ही पर्युषण पर्व की तैयारियां प्रारम्भ हो गई जिसमें आज आप हम सब भाग ले ही रहे हैं।

महा समिति के कार्यों के सम्बन्ध में विभागीय दृष्टि से भी कुछ विचार कर लेना ठीक रहेगा।

श्री मन्दिरजी में ऊपर बने महावीर स्वामी के देरासर में वेदी पूरी बन चुकी है। इस कार्य में श्रीमती प्रभावती बहन (कान्तीलालजी लल्लुभाई) बम्बई वालो का भारी सहयोग प्राप्त हुआ है। मन्दिरजी के चार स्तम्भों में मकराना लगने का कार्य बाकी है कुछ समय की कमी के कारण ही वह काम नही हो सका है पर आशा है दीवाली से पूर्व वह भी सम्पन्न हो जावेगा। भगवान महावीर के भवों के चित्र पट बनाने का कार्य भी यही महासमिति अपने काल में ही प्रारम्भ करा देगी ऐसी आशा है। इस कार्य मे सहायक दाताओं की एवं प्रतिष्ठा में भगवानों को विराजमान करने का लाभ लेने वालों की नामावली आरस के पत्थर पर लिखवा कर लगावा दिये गये हैं। सम्प्रति कालीन भव्य कार्योत्सर्ग मुद्रा वाले महावीर स्वामी भगवान् की मनोहर आंगी बनवाकर भेंट करने का लाभ श्री पूनम बाबू एण्ड सन्स बम्बई ने लिया है। भगवान् को सवारी के लिये सोने-चादी की एक कलापूर्ण सुन्दर पालकी भी इसी वर्ष बनवाई गई है।

जयपुर के इस सर्वाधिक प्राचीन देरासर में काँच, रग व सोने के पुराने काम को पुरानी कला को कायम रखते हुये नव-निर्मित कराया जा रहा है और यह कार्य निरन्तर चालू है। मूल नायक

श्री सुमतीनाथजी की वेदी मे खम्भो और बगली मे सोने व रग का काय श्री बुधसिहजी वैद की ओर से कराया जा रहा है।

इस काल मे देरासर के जिर्णोद्धार हेतु ४०००) रु० की राशि की स्वीकृति श्री गौडीजी देरासर बम्बई से प्राप्त हुई इस काय मे वहाँ के श्री रसीक भाई जवेरी का अच्छा सहयोग प्राप्त हुआ। १००१) रु० की राशि की स्वीकृति श्री चोपाटी जैन श्वे० मन्दिर, बम्बई से पूज्य विशाल विजयजी महाराज सा० की प्रेरणा से प्राप्त हुई। ७५१) रु० की राशि की स्वीकृति श्री मगलचन्दजी छगनाजी चौधरी की ओर से प्राप्त हुई।

भगवान् महावीर के भवो के चित्रो के निर्माण मे भी काफी बडी राशि खच होगी ही इसके लिये भी उदारमना भाइयो से सहयोग प्राप्त हो जावेगा इन चित्रो के निर्माण के बाद इस स्थान की शोभा तो बढेगी ही साथ ही इस स्थान को ऐतिहासिक महत्व भी प्राप्त हो जावेगा।

मन्दिर व्यवस्था मत्री श्री शिखरचन्द जी पालावत मन्दिरजी की व्यवस्था को सुन्दरतम बनाने का पूण प्रयत्न कर रहे हैं।

मन्दिरजी मे प्रवेश द्वार के पास ही एक कमरा और बनवाया गया है तथा जीने की दीवारो पर चिप्स कराकर उसे सुन्दर बनाया गया है।

आगम प्रभाकर स्व० श्री पुण्य विजयजी महाराज सा०, आचाय श्री विकासचन्द सुरीश्वरजी महाराज सा० एव पन्यास श्री सम्पत विजयजी महाराज सा० के स्वगवास के समाचारो को ज्ञात कर शोक सभा का आयोजन किया गया, प्रस्ताव पारित किये गये व सद्गत आत्माओ के लिये शासन देव से प्रायना की गई। आ० विजय विकासचन्द्र सुरीश्वजी म० का चतुर्मास स० १९९१ मे जयपुर में हुआ था—जयपुर पर उनका अनन्य उपकार था।

पूज्य साध्वी जी महाराज साहब ने समाज के मध्यम वग के राहत के लिये कोई योजना बनाकर काम प्रारम्भ करने की काफी प्रेरणा दी। महा समिति ने इस सम्बन्ध मे एक उप-समिति बनाई और उप-समिति द्वारा इस काय हेतु बनाये गये विधान आदि पर भी विचार किया एव उसे स्वीकृति प्रदान कर इस योजना को मूत्त रूप देने के लिये एक उप-समिति भी बनाई—स्थान प्राप्त करने और काम करने वाले भाइयो की रूचि जागृत करने के लिये प्रयत्न चालू हैं। यदि इस तरह की कोई भी योजना ने मूत्त रूप लिया तो महा समिति इसमे भरसक सहायता करेगी।

समीप ही के तीर्थ बरखेडा में प्रति वप आयोजित होने वाले मेले के अवसर पर होने वाले साधर्मीवात्सल्य हेतु ४००) रु० राशि साधारण खाते से दी गई। इसके अलावा और भी करीब २ हजार की राशि बाहर की सस्थाओ को देवद्रव्य और साधारण खाते से सहायताथ दी गई है।

गत कई वर्षों से कुछ उगाही सस्था के सब सीगा की ऐसी थी जिनके प्राप्त होने की आशा नही थी, एक समिति के माध्यम से उन्हे वापस जमा खच कर बराबर कर दिया गया। सस्था की बाकी उगाही की प्राप्ति के लिए गत वप श्री पूरण विजय जी महाराजसा ने तथा इस वप साध्वी जी म सा ने प्रभावक ढग से प्रेरणा दी है, उगाही वसूल हुई भी है बाकी के लिए प्रयत्न चालू है। उगाही जल्दी प्राप्त होने से सस्था के कार्य को गति मिलती है और प्राप्त नही होने से विकास रुक जाता है। इसलिये जिन महानुभावो मे उगाही बाकी है उसे जमा कराने का महा समिति नम्र निवेदन करती है।

सभा भवन मे आ० विजय भक्ति सुरीश्वरजी म के चित्र का अनावरण भी हुआ उपाश्रय मत्री श्री रणजीतसिह जी भडारी की लग्न और भावना

से उस क्षेत्र मे आराधना करने वालों को अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है।

वर्धमान आयाम्बिलशाला जिसकी स्थापना उपाध्याय श्री धर्मसागर जी म. की प्रेरणा से सं० २०१२ मे हुई थी का कार्य सुन्दर ढंग से चल रहा है करीव १० हजार भाई वहिन वर्ष भर मे इससे लाभ उठाते है। गर्म पानी की भी हर वक्त व्यवस्था रहती है। नवपद जी की दोनों ओलियों का लाभ श्री चिमनलालजी पी. शाह जोरावर नगर वालों ने लिया था।

आयम्बिलशाला के व्यवस्थापक श्री कुनणमलजी छाजेड़ के अपने पद से त्याग पत्र दे देने के कारण इस पद पर श्री जवाहरलालजी चोरडिया आगरे वाले की नियुक्ति की गई है।

धार्मिक पाठशाला चालु है। बच्चे इसके माध्यम से धार्मिक ज्ञान प्राप्त करने के साथ सगीत भी सीख रहे है। पाठशाला को जो गति मिलनी चाहिए वह वयस्कों की उदासीनता से एव दूर २ कालोनियों मे निवास करने से नहीं मिल पाई है। पुस्तकालय से अव भाई वहीन अच्छी सख्या मे लाभ उठा रहे हैं। शिक्षामंत्री श्री धनरूपमलजी इस ओर रुचि बढाने के लिये प्रयत्नशील है। पाठ-शाला का खर्चा इस वर्ष भी उठाने की स्वीकृति श्री हीराचन्द जी एम. शाह उपाध्यक्ष ने दे दी है।

जीवदया विभाग की ओर से कबूतरो को रोजाना ज्वार डाली जा रही है उसकी तादाद ५ किलो रोज कर दी गई है।

'मणिभद्र' पत्र तो इस संस्थान के प्रति जयपुर व बाहर लोक रुचि प्राप्त करने का सुन्दर माध्यम वन गया है। इस वर्ष तो इसका एक अतिरिक्त अंक भी निकला है। तेरहवें पुष्प का अनावरण आज हो रहा है। इसके प्रकाशन मे हमारी महा समिति के सदस्य श्री शान्तीलाल जी वाफना का योगदान अत्यधिक प्रशंसनीय है। महासमिति इसके लिये उनके प्रति हृदय से आभारी है।

इस वर्ष हमारे उपाध्यक्ष श्री हीराचन्द जी एम. शाह को अपने पिताजी श्री मंगलचन्द जी चौधरी का आकस्मिक वियोग सहना पडा है। श्री चोधरी जी ने अपने जीवनकाल में व्यवसायिक क्षेत्र मे तो अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की ही थी पर धार्मिक क्षेत्र मे भी आपकी भावना और उदारता प्रेरणादायी थी अपने जीवन के अन्तिम समय में अपने जन्म स्थान मण्डार के प्रतिष्ठा महोत्सव में आपने शानदार हिस्सा लिया था। गत वर्षो में आपका स्वयं का एवं आपकी जयपुर फर्म का जो सुन्दर योगदान इस सस्थान को प्राप्त हुआ वह भुलाया नहीं जा सकता महा समिति ने शोक प्रस्ताव पारित कर स्वर्गस्थ आत्मा की शान्ति के लिए शासनदेव से प्रार्थना की साथ ही उनका एक चित्र सभाभवन मे लगाने का भी निश्चय किया गया।

पूज्य साध्वी जी म. सा. ने इस वर्ष एक और प्रेरणा देकर जहां स्व अर्पित द्रव्य से प्रभु भक्ति के सुकृत संचय का लाभ प्राप्त कराया है वहां मदिरजी मे अजान में हो रहे पूजन सामग्री मे देव द्रव्य के खर्चे के दोष से भी संघ को बचाया है। अपनी वर्षगांठ के दिन ११) की तिथि लेकर आप अपनी ओर से मंदिरजी की पूजन सामग्री के खर्चे मे सहायक वनकर पून्य अर्जित कर सकते हैं ऐसी १५० मितियां एक ही रोज मे भराई भी गई है। वाकी मितियां भी इसी पर्व मे भर जावेगी ऐसी आशा है।

सस्थान की व्यवस्था हेतु आप द्वारा चुनी गई महासमिति आपका विश्वास प्राप्त करने की सदैव आतुर रही है और आप श्री संघ ने भी तत्परता से हर कार्य मे तन, मन, धन का हार्दिक सहयोग प्रदान किया है। फिर भी व्यवस्था करने वालो से गल्तियां हो जाना स्वाभाविक हैं उन सवके प्रति विनय पूर्वक क्षमा प्रार्थना करते हुए हमें आपकी उदारता मे अत्यधिक विश्वास है।

यह सस्था आप सवके सहयोग और स्नेह से फलती फूलती रहे महा समिति अपने कर्तव्य का पालन करती रहे। हमारी सवकी धार्मिक भावनाओ को वेग मिलता रहे इसी मंगल कामना के साथ।

शुभेच्छा। (महासमिति द्वारा स्वीकृत)

परिशिष्ट १

श्री जैन श्वेताम्वर तपागच्छ सघ जयपुर के मन्दिर का आय-व्यय प्रतिवेदन

(जेठ बद ऽऽ स० २०२८ तक)

जमा का विवरण			राशि
श्री भण्डार खाते जमा			२३,१४१ २३
गत वर्ष की बचत		१९,१२० ९०	
इस वर्ष की आय		४,०२० ३३	
भण्डार खाते	८४० १९		
गोलख से	२,८२० १४		
किराया	३६० ००		
श्री पूजन खाते जमा			३,३९६ ४१
इस वष की आय		३,३९६ ४१	
पूजन खाते	२,१८० ६५		
गोलख से	१३७ २१		
ज्योत खाते	१,०७८ ५५		
श्री विशिष्ट आय खाते जमा			९८,५५३ ००
गत वर्ष की बचत		८५ ८१७ ५८	
इस वष की आय		१२,७३५ ४२	
स्वपन जी की बोली	१०,२७६ ५०		
ब्याज का	२,२४२ ३८		
जिर्णोद्धार का	२१६,५४		
			१,२५,०९० ६४

नामे का विवरण			राशि
श्री भण्डार खाते नामे			१०,६०९ ४६
इस वष का खर्च		१०,६०९ ४६	
भण्डार खाते	१,०७४,००		
पुरानी उगाही का जमा खर्च	६,२६६ ५७		
वेतन खाते	१,७४८ ००		
बिजली खच	१,५२० ८९		
श्री पूजन खाते नामे			९,२४१ ६८
गत वष तक लगते हुये		१,२७० ६१	
इस वष का खर्च		७,९७१ ०७	
पूजन खाते	४,८६४ ३२		
ज्योत खाते	३,१०६ ७५		
श्री विशिष्ट आय खाते नामे			४,४०० ६१
इस वष का खर्च		४,४००,६१	
विशिष्ट खाते	४३०,७७		
जिर्णोद्धार खर्च	३,९५८,०७		
आर्ट गेलेरी	११ ७७		
			२४,२५२ ०५

परिशिष्ठ २

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

साधारण खाते का आंकड़ा (२०२७–२०२८)

(जेठ बद ऽऽ सं० २०२८ तक)

जमा का विवरण			राशि
श्री साधारण खाते जमा			१३,८४५.६६
गत वर्ष आंकड़े मे जमा		४,०८५.०७	
इस वर्ष की आय		९,७६०.५९	
गोलख व सहायता	६,४३७.२६		
वैयावच्च खाते	१६.९३		
पेटियों से प्राप्त	९६.२५		
उपाश्रय	१०२.५३		
किराया	१,८५४.००		
श्री मणिभद्र प्रकाशन	३०५.००		
साधर्मी वात्सल्य	२२४.१५		
बिजली खाते	४९९.८४		
पारणा खाते	१४४.००		
व्याज का	८०.६३		
	९,७६०.५९		
श्री कर्मचारी कल्याण कोष			६२.००
श्री नवपद ओली पारणा खाता			१,००१.००
श्री सम्वतसरी पारणा खाता			१,५८७.००
श्री मंदिरजी का देना जमा			२,९५०.००
		योग	१९,४४५.६६

नाम का विवरण			राशि
श्री साधारण खाते जमा			१०,३६९.२३
इस वर्ष का व्यय		१०,३६९.२३	
साधारण खाते	३,७८५.८३		
पुराने उगाई का जमा खर्च	६४१.००		
वैयावच्च खाते	९६५.२३		
प्रभावना खाते	१८२.१८		
मणिभद्र प्रकाशन खाते	३९९.७५		
साधर्मी भक्ति खाते	३.३५		
बिजली खर्च खाते	५६७.०४		
सम्वतसरी नवपद ओलीजी पारणा खर्च	३८३.०४		
वेतन खर्च	३,३०८.३१		
पानी खर्चा	१३३.५०		
	१०,३६९.२३		
श्री उपकरण खरीद खाते बिक्री हेतु			३५७.१९
फिक्स डिपोजिट (स्टेट बैंक बी० ज० में)			१,२५६.७२
श्री उगाही खाते बाकी			६,४०३.०३
श्री आँकड़े फर्क			०.२०
श्री रोकड़ पोते बाकी			१,०५९.२९
		योग	१९,४४५.६६

(ह०) पुष्पमल लोढा, अर्थ मंत्री

(ह०) जतनमल लनावत, हिसाब निरीक्षक

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर

श्री ज्ञान खाता स० २०२७-२८ (जेष्ठ सुदी १, स० २०२७ से जेष्ठ बुदी ऽऽ २०२८ तक)

जमा का विवरण		राशि	नामे का विवरण			राशि
श्री ज्ञान खाते जमा		६७४८ ८६	श्री ज्ञान खाते जमा			२३४५ ०२
गत वप की बचत की राशि	२३३७ ४६		श्री ज्ञान खाते खच		१५१ २४	
इस वप की श्राय	३१३० ७५		पुरानी उगाई का जमा खर्च		५८३ ७५	
श्री श्रात्मानन्द धार्मिक पाठशाला हेतु श्री भँवरलाल शान्तिलाल जी भण्डार वालो से प्राप्त	१२०० ००		श्री श्रा धा पाठशाला खच		११६१ ७६	
ब्याज का	८० ६२		श्री जैन श्वे मित्र मण्डल पुस्तकालय		४४८ २७	
	६७४८ ८६		वेतन	२७० ००		
			पत्र पत्रिका	७८ ५२		
			पुस्तक खरीद	२४ ७५		
			बिजली खर्च	७५ ००		
			श्री स्टेट बैंक आफ बीकानेर एण्ड जयपुर (फिक्स डिपाजिट)			१२५६ ३८
			श्री उगाई खाते बाकी			२१४४ ३५
			श्री रोकड बाकी			१००३ ११
योग		६७४८ ८६	योग			६७४८ ८६

(ह०) पुष्पमल लोढा, श्रथ मन्त्री

(ह०) जतनमल लुनावत, हिसाब निरीक्षक

जमा का विवरण		राशि
	पिछले पृष्ठ से	१,२५,०६०.६४
श्री मणिभद्रजी भण्डार खाते		१५,४१२.१५
गत वर्ष की बचत	१०,५६०.५८	
इस वर्ष की आय	४,८२१.५७	
श्री गुरुदेवजी के भण्डार खाते		५७४.४७
गत वर्ष के	४६६.७२	
इस वर्ष की आय	१०४ ७५	
श्री शासन देवी खाते जमा		३५६.७२
गत वर्ष का	२८०.१३	
इस वर्ष की आय	७६.५६	
श्री जीवदया खाते जमा		३,४८७.०५
गत वर्ष का	२,३२५.३५	
इस वर्ष की आय	१,१६१.७०	
श्री सम्मेत शिखर तीर्थ यात्री संघ का जमा		१,०७५.२०
श्री सुमति कार्यालय का जमा		५,८७७.१५
श्री श्राविका संघ का जमा		३,४२२.८५
श्री नव निर्माण खाते जमा		३४,२७८.००
गत वर्ष तक का जमा	१८,१७७.००	
इस वर्ष में	१६,१०१.००	
		१,८६,५७७.२३

नामे का विवरण		राशि
	पिछले पृष्ठ से	२४,२५२.०५
श्री मणिभद्रजी भण्डार खाते (इस वर्ष का)		२,१५६ ४५
श्री गुरुदेवजी भण्डार खाते (इस वर्ष का खर्च)		१५८.७५
श्री शासन देवी खाते (इस वर्ष का खर्च)		५०.००
श्री जीवदया खाते नामे (इस वर्ष का खर्च)		६२६.५०
श्री चन्दलाई मन्दिर खाते		११२.५८
श्री आयम्बिल शाला खाते लेने बाकी		२२,४२०.४८
श्री साधारण खाते लेने बाकी		२,६५०.००
श्री उचंत खाते दिये हुये		२,७०५.००
(मूर्तियों वास्ते)	२,६०५ ००	
(तस्वीरें जड़ाई पेटे)	१००.००	
श्री नव निर्माण खाते		६०,५४२.६६
गत वर्ष तक लगते	३३,१५४.८६	
इस वर्ष के लगे	२७,३८७.८०	
		१,१६,२७७.४७

जमा का विवरण		राशि
	पिछले पृष्ठ से	१ ८६,५७७ २३
श्री भीलवाडा खाते जमा		४ २०
श्री खात क्षेत्र खाते जमा		५१३ ९४
गत वर्ष का	३९३ ६६	
इस वर्ष की आय	१२० २८	
योग		१,९०,०९५ ३७

नामे का विवरण		राशि
	पिछले पृष्ठ से	१,१६ २७७ ४७
श्री फिक्स डिपाजिट खाते		२४,४१७ ३८
स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर जयपुर मे	९,४१७ ३८	
बैंक ऑफ बडोदा मे	१५ ००० ००	
श्री स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर चालू खाते मे		८,४६१ ६७
श्री उगाही खाते बाकी		४०,३०५ ९८
श्री फर्क खाते		१ २४
श्री रोकड पोते बाकी (जेठ सुद १ स० २०२८)		६३१ ६३
योग		१,९० ०९५ ३७

(ह०) पुष्पमल लोढा, अर्थ मंत्री

(ह०) जतनमल लुनावत, हिसाब निरीक्षक

श्री विश्व कल्याण प्रकाशन, जयपुर

वार्षिक कार्य-विवरण

भादवा सुद १ सं० २०२५ को जयपुर नगर में चातुर्मासार्थ बिराजित युवक मुनि महान् प्रवचनकार श्री भद्रगुप्त विजयजी महाराज सा० की प्रेरणा से सरल सुबोध एवं ज्ञानवर्धक साहित्य के प्रकाशन हेतु इस सस्था का जन्म हुआ। तीन वर्ष के इस अल्प शिशु संस्थान ने जो कार्य सम्पन्न किया वह स्वतः ही इस संस्था के कार्य व परिचय के लिये काफी है।

तीन वर्ष में योजनानुसार ११ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं और १२वीं पुस्तक ज्ञानसार का द्वितीय भाग प्रेस मे है। अब तक २५) रु० कीमत की ११ पुस्तकें सदस्यों के पास पहुँच चुकी हैं अभी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ६ पुस्तकें और प्रकाशित होनी हैं जिनकी कीमत भी करीब २६) रु० बनेगी। इस तरह इस योजना के अन्तर्गत ३१) रु० वाले सदस्य को ५१) रु० कीमत का साहित्य पांच वर्ष में प्राप्त हो सकेगा।

इस संस्था के अब तक ४०० करीब सदस्य बन चुके हैं इनमें हिन्दी भाषी प्रदेश के बाहर के भी सदस्य काफी संख्या मे हैं। इन तीन वर्षो में प्रकाशन के अन्तर्गत २७ हजार पुस्तकें छप चुकी हैं। सदस्यता एवं पुस्तक बिक्री के करीब २४ हजार रुपये प्राप्त हुये है जबकि प्रकाशन व सामान खरीद में करीब २२ हजार रुपया खर्च भी हो चुका है।

प्रकाशन का साहित्य ग्रीष्म शिविरो में पाठ्य पुस्तकों के तौर पर भी चल रहा है। पूज्य भद्रगुप्त विजय जी म० की लेखनी से लिखा यह साहित्य अत्यधिक लोकप्रिय हुआ है। उत्तम छपाई, आकर्षक टाइटिल एवं सुरुचि पूर्ण साहित्य के कारण हिन्दी साहित्य के प्रकाशन में इस संस्था ने थोड़े से समय में ही अपना अच्छा स्थान बना लिया है। पूज्य महाराज साहब का वरद् हस्त निरन्तर इस संस्था पर बना हुआ है इसीसे संस्था अबाध गति से प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

संस्था के पास जगह की अत्यधिक कमी है—साहित्य को सुव्यवस्थित रखना भी मुश्किल हो रहा है। इस ओर भी संस्था के सहयोगियों एवं शुभेच्छुकों को ध्यान करना ही है।

प्रारम्भ से ही संस्था को श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर का हार्दिक सहयोग मिल रहा है उसके लिये प्रकाशन आभारी है।

संस्था ने अपने कार्य के साथ ही कुछ दूसरे काम भी हाथ में ले रखे हैं। दिव्यदर्शन प्रकाशन की ३ पुस्तको के प्रकाशन में भी अपना पूर्ण सहयोग दिया है। इसी प्रकाशन की चौथी पुस्तक 'आवश्यक सूत्र चित्रावली' जिसके प्रकाशन में करीब १५ हजार रुपया खर्च होगा, के कार्य मे इस संस्था का पूरा योगदान है। इन पुस्तकों के वितरण में भी संस्था सक्रिय है।

पूज्य विशाल विजयजी म० सा० द्वारा लिखित 'सुदर्शना चरित्रम्' संस्कृत ग्रन्थ का प्रकाशन भी विश्व कल्याण प्रकाशन के सहयोग से हो रहा है। इस पुस्तक का प्रकाशन जल्दी ही श्री सर्वेश्वर पार्श्वनाथ देरासर की पेढी, दौलत नगर, बम्बई की ओर से हो रहा है।

संस्था आपसे हर तरह के सहयोग की इच्छुक है। संस्थायें ५०१) रु० भेजकर आजीवन सदस्य व साहित्य प्रेमी १०१) रु० भेजकर संरक्षक व ३१) रु० भेजकर पचवर्षीय सदस्य जल्दी से जल्दी बने यही विनती है।

हीराचन्द वैद
पारसमल कटारिया
मानद मंत्री

आय-व्यय परिशिष्ट (विश्व कल्याण प्रकाशन)

(भादवा सुद १ स० २०२५ से भादवा वद ऽऽ स० २०२८ तक)
(स० २०२७ के भादवा वद ऽऽ को प्रकाशित आंकड़े सहित)

१९७३८) श्री विश्व कल्याण प्रकाशन सदस्यता शुल्क खाते जमा
१७४५४) गत वर्ष तक
२२८४) इस वर्ष के
१९७३८)

४२३३)२५ श्री पुस्तक एवं चित्र बिक्री खाते जमा
३७७२) गत वर्ष तक
४६१)२५ इस वर्ष के
४२३३)२५

१३३)१० श्री सहायता खाते जमा
७६)१० गत वर्ष तक
५७) इस वर्ष के
१३३)१०

१७६)५२ श्री ब्याज खाते जमा
२४)६५ गत वर्ष तक
१५१)८७ इस वर्ष के
१७६)५२

८२७)५१ श्री अमानत खाते जमा
११२)७१ गत वर्ष तक
७१४)८० मुद्रणना चरित्र पेटे मारफत पूज्य विशाल विजयजी महाराज साहब
८२७)५१

२५१०८)३८

२०५२०)२९ श्री पुस्तक प्रकाशन खाते नामे
(पंचवर्षीय योजना की १० पुस्तकें एवं अन्य ८ पुस्तकें एवं कम किताब चित्र की छपाई, बाइंडिंग ब्लाक, कागज, डाक व्यय, स्टेशनरी आदि में)
१४५७२)८८ गत वर्ष तक
५९४७)४१ इस वर्ष में
२०५२०)२९

११२८)५० श्री सामान खरीद खाते
गत वर्ष तक

८६) श्री [illegible] खाते नामे
६०) गत वर्ष तक
२६) इस वर्ष में
८६)

२२२२)८३ श्री बैंक ऑफ बड़ोदा के सेविंग खाते में लेने

१८६) श्री उगाही खाते नामे
मारफत उदयपुर शाखा के
गत वर्ष तक

९३१) श्री उचत खाते नामे
ग्यारहवीं पुस्तक ज्ञानसार द्वि० भाग की छपाई बाइंडिंग पेटे दिये हुये। अन्य
८००) १३१)

२५०७४)६२

३३)७६ श्री पोते बाकी

२५१०८)३८

श्री विश्व कल्याण प्रकाशन,
जयपुर

हीराचन्द वैद
पारसमल कटारिया
मानद् मंत्री

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

श्री वर्द्धमान आयम्बिल शाला खाता सं. २०२७-२८ (जेष्ठ सुदी १ सं. २०२७ से जेष्ठ बदी ऽऽ सं. २०२८ तक)

जमा का विवरण		राशि
श्री आयम्बिल कोष खाते जमा		८८८९.६२
इस वर्ष की आय		
(मितियां, ओलीजी व गोलख से)	५२३९.८४	
विशेष सहायता	३९१.००	
किराया दुकान बापू बाजार	२४००.००	
ब्याज का	८५८.७८	
	८८८९.६२	
श्री स्थाई मितियाँ खाते जमा		२१२३६.००
गत वर्ष तक	१८३०७.००	
इस वर्ष का	२९२९.००	
	२१२३६.००	
श्री मन्दिरजी का जमा		२२४२०.४८
श्री गृहकर (दुकान का) जमा		२४३.००
श्री बरतन खाते		५१.००
श्री आंकड़ा फर्क		०.५०
योग		५२८४०.६०

नाम का विवरण		राशि
श्री आयम्बिल खर्च खाते		१२१५३.८५
गत वर्ष का बाकी	८८२.१९	
पुरानी उगाई का जमा-खर्च	१०३३.७४	
खाद्य सामग्री खरीद	३६९४.३४	
मुतफरीक खर्च (ईन्धन आदि)		
गत वर्ष की देनदारी चुकाकर	२७३०.७३	
वेतन कर्मचारी खर्च	२५१२.८५	
ब्याज मंदिरजी जमा राशि का	१३००.००	
	१२१५३.८५	
श्री बरतन खाते		५७.६३
श्री स्टेट बैंक आफ बीकानेर एण्ड जयपुर (फिक्स डिपोजिट)		१०२६१.२०
श्री बापू बाजार दुकान खरीद खाते		२५७४८.४५
श्री उगाई खाते बाकी		४४६२.०५
श्री रोकड़ बाकी		१५७.४२
योग		५२८४० ६०

(ह०) **पुष्पमल लोढा,** अर्थ मंत्री

(ह०) **जतनमल लुनावत,** हिसाब निरीक्षक

परिशिष्ट न० ५

श्री वर्धमान् आयम्बिल शाला, जयपुर

इस वर्ष प्राप्त स्थाई मितिया

(२०२७-२८)

१८३०७) गत वर्ष के आंकडे तक प्रकाशित स्थाई मितियों की राशि
२६२६) इस वर्ष मे प्राप्त स्थाई मितिया

१२५) स्वर्गवासी सुखलालजी बोहरा, बम्बई
४५१) केसरीमलजी किस्तूरचन्दजी, अहमदाबाद
१२५) इन्दरमलजी कोठारी, जयपुर
१२५) इन्दरमलजी माणकचन्दजी कोठारी, जयपुर
१२५) श्रीमती सरदारबाईजी सुराणा, धर्मपत्नी कनकमलजी
१२५) गोपीनाथजी रूपकिशोरजी श्रीमाल डेरीवाले
४५१) चान्दसिहजी फतेहसिहजी कर्नावट, जयपुर
१२५) केसरीमलजी सागरमलजी, नाडलाई
१२५) नेमीचन्दजी भसाली, जयपुर
१२५) सूरजमलजी बोथरा
४५१) हीराचन्दजी मनकाजी बोवदीया, मंडार
१२५) श्रीमती सोहन कँवर धर्म पत्नी सूरजमलजी झाड, जयपुर
४५१) गोड़ीदासजी पारसदासजी ढढ्ढा, जयपुर

२६२६)

२१२३६) कुलयोग

नैतिक, आध्यात्मिक, सुबोध हिन्दी साहित्य
(महान प्रवचनकार मुनि श्री भद्रगुप्त विजय जी म० की यशस्वी लेखनी से)
की
अनुपम – भेंट
तीसरे वर्ष की चौथी पुस्तक

"ज्ञानसार"

(द्वितीय भाग)

प्रकाशित हो रही है

पांच वर्ष में घर बैठे २० पुस्तकें केवल ३१) रु० भेजकर
व
पंचवर्षीय सदस्य बनकर प्राप्त करें।

टेलीफोन सम्पर्क C/o ६२२६२

मानदमंत्री
विश्व कल्याण प्रकाशन
C/o आत्मानन्द सभा भवन,
घी वालो का रास्ता जयपुर-३

स्व० श्री मगल चंद जी चौधरी

आपका जन्म मण्डार ग्राम (जिला सिरोही) में सन १९०९ में श्री छगना जी चौधरी के यहाँ हुआ। वालपन से ही माता जी से उन्हें अच्छे संस्कार प्राप्त हुये। तेरह वर्ष की अल्प आयु मे वम्वई जाकर कारोवार प्रारम्भ किया वाद में तो दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास और जयपुर में भी आपने व्यवसायिक संस्थान खड़े किये। विशेपता यह रही कि जिस शहर में भी आपके संस्थान खुले, वहाँ के धार्मिक व सामाजिक कार्यों में आपका उत्साह पूर्ण उदात् सहयोग रहा।

आपकी धर्मपत्नी श्रीमती रतन देवी जी का जीवन भी धार्मिक प्रवृत्तियों से ओत-प्रोत रहा है। सन १९६१ में आपने स्वयं उपधान तपकर ४७५ भाई वहिनों को भी तप का लाभ प्राप्त कराया। इसी वर्ष मण्डार मे जैन उपाश्रय भी आपने वनवाया।

करीव १० वर्ष से आप गरम जल का सेवन कर रहे थे, रात्रि भोजन का तो त्याग था ही, ब्रह्मचर्य व्रत भी आपने ले लिया था।

हाल ही में हुयें मण्डार ग्राम के प्रतिष्ठा महोत्सव में आपने प्रमुख भाग लिया था। १३ मई ७१ को अचानक कलकत्ते मे आपका स्वर्गवास हो गया।

श्री शान्तीलाल जी, श्री सूरजमल जी, श्री हीराचन्द जी व श्री भास्कर जी आपके सुपुत्र है सुश्री मंजूला और पुष्पा आपकी पुत्रियां हैं। श्री हीराचन्द जी श्री जैन श्वे० तपा गच्छ संघ, जयपुर के उपाध्यक्ष है। सघ की सव प्रवृत्तियों मे आपका महान योगदान प्राप्त होता रहा है :

स्व० श्री मंगलचंद जी एवं उनकी फर्म का जयपुर संघ से निकट का सम्पर्क रहा है, उनकी स्मृति मे उनका एक चित्र आत्मानन्द सभा भवन में लगाया जा रहा है।